समरथ

मार्च - अप्रैल 2005 नई दिल्ली

नाहि तो जनम नसाई

'देश की सुरक्षा को ख़तरा है।' यह नारा हर दूसरे तीसरे दिन अख़बारों और टी.वी. चैनलों की सुर्खियों में नज़र आ जाता है। हर दिन कोइ न कोई नेता देश की सुरक्षा पर मंडराते ख़तरे को भाँप लेता है। ये ख़तरा और भी विकट रूप तब ले लेता है, जब देश की बदहाल जनता अपनी सुरक्षा की मांग करने लगती है। वो अपनी सुरक्षा के लिए कुछ अधिक मांग नहीं करती है। उसकी मांग तो बस पेट भरने और हो सके तो सम्मानपूर्वक ज़िंदगी जीने तक ही सीमित रहती है। लेकिन जब देश की सुरक्षा ख़तरे में पड़ी हो तो तुच्छ मांगों की कीमत ही क्या? बल्कि जनता से तो उम्मीद ये की जाती है कि ऐसी तुच्छ मांगों को या फिर अपनी व्यक्तिगत सुरक्षा को भूलकर देश की सुरक्षा करने में तन-मन-धन से जुट जायें। ज़ाहिर है कि देश की सुरक्षा को ख़तरा है, जैसा नारा देने वाले देश की परिभाषा में जनता को तभी तक शामिल करते हैं जब तक जनता देश को बचाने में अपना पूरा योगदान देती रहे। जिस क्षण जनता अपनी व्यक्तिगत सुरक्षा की दुहाई दे, वो देश की परिभाषा से बाहर हो जाती है। पंजाब के क्रांतिकारी कवि पाश की यह कविता इसी स्थिति की एक तस्वीर पेश करती है।

अपनी असुरक्षा से

पाश

यदि देश की सुरक्षा यही होती है
कि बिना ज़मीर होना ज़िंदगी के लिए शर्त बन जाए
आँख की पुतली में 'हाँ' के सिवाय कोई भी शब्द
अश्लील हो
और मन बदकार पलों के सामने दंडवत झुका रहे
तो हमें देश की सुरक्षा से ख़तरा है

हम तो देश को समझे थे घर-जैसी पवित्र चीज़
जिसमें उमस नहीं होती
आदमी बरसते मेंह की गूँज की तरह गलियों में बहता है
गेहूँ की बालियों की तरह खेतों में झूमता है
और आसमान की विशालता को अर्थ देता है

हम तो देश को समझे थे आलिंगन-जैसे एक एहसास का नाम
हम तो देश को समझते थे काम-जैसा कोई नशा
हम तो देश को समझते थे कुर्बानी-सी वफा
लेकिन 'गर देश
आत्मा की बेगार का कोई कारखाना है
'गर देश उल्लू बनने की प्रयोगशाला है
तो हमें उससे ख़तरा है

'गर देश का अमन ऐसा होता है
कि क़र्ज के पहाड़ों से फिसलते पत्थरों की तरह
टूटता रहे अस्तित्व हमारा

और तनखाहों के मुँह पर थूकती रहे
कीमतों की बेशर्म हँसी
कि अपने रक्त में नहाना ही तीर्थ का पुण्य हो
तो हमें अमन से ख़तरा है

'गर देश की सुरक्षा को कुचलकर अमन को रंग चढ़ेगा
कि वीरता बस सरहदों पर मरकर परवान चढ़ेगी
कला का फूल बस राजा की खिड़की में ही खिलेगा
अक्ल, हुक्म के कुएँ पर रहट की तरह ही धरती धरती सींचेगी
तो हमें देश की सुरक्षा से ख़तरा है।

हिन्दुत्व आन्दोलन का सामाजिक आधार

राम पुनियानी

हिन्दुत्व आन्दोलन का प्रारंभ अधिकांशत: ब्राह्मणों के नेतृत्व में हुआ। इसे जमींदार कुलीन वर्ग और मध्यम वर्ग के कुछ तबकों से समर्थन मिला। गरीब किसानों के साथ-साथ उभर रहे उद्योगपतियों और नये व्यावसायिक तबके के लोगों ने खुद को गांधीजी के राष्ट्रवाद के साथ जोड़ा, जबकि मातहत वर्ग ने अपने आपको अंबेडकर या कम्युनिस्ट पार्टी के आन्दोलन के साथ जोड़ा।

प्रशिक्षित, समर्पित, तपस्वी कार्यकर्ताओं के बावजूद धार्मिक राष्ट्रवाद उत्तर भारत के हिन्दीभाषी क्षेत्र में ब्राह्मणों, बनियों, धनी किसानों और मध्यम वर्ग तक ही सीमित रहा। गोहत्या बंदी, 'मुसलमानों का भारतीयकरण' के अभियान की विफलता इसका सूचक है। साम्प्रदायिक दंगे भी छठे दशक से होना शुरू हुए और समय बीतते उत्तरोतर भयानक रूप धारण करते गये। सातवें और आठवें दशक तक हिन्दुत्व की विचारधारा शीघ्रता से फैलती गयी और मुस्लिम विरोधी दंगे विकराल रूप लेने लगे।

जनसंघ और उसके उत्तराधिकारी भाजपा की शुरूआत शहरी मध्यम वर्ग, ब्राह्मणों के एक तबके तथा बनियों के समर्थन से हुई। आइए, हम लोकतंत्र के विगत 50 वर्षों में हुए सामाजिक ढांचे में बदलाव का जायजा लें। शहरी आबादी का अनुपात 20 से 25 प्रतिशत बढ़ा है। औद्योगीकरण की प्रक्रिया के दौरान हासिल आधुनिक शिक्षा तथा अन्य सुविधाओं का लाभ इस तबके को मिला। निश्चित ही समाज में उनकी उपस्थिति एक प्रमुख हैसियत रखती है। इस तबके की सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनैतिक आकांक्षाओं के आधार पर ही संघ परिवार की इमारत खड़ी हुई।

संघ परिवार के सामाजिक आधार को समझने के लिये हम गुजरात के सामाजिक दलों के पुनर्दलीकरण पर एक नजर डालें। नन्दी जैसे लेखकों ने इस प्रक्रिया पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला है। शहरीकरण की इस प्रक्रिया के साथ-साथ गुजरात के सम्पन्न किसान वर्ग की प्रगति की भी समान्तर प्रक्रिया चलती रही जिसने उसका सामाजिक दर्जा और भी बढ़ाया। इस पाटीदार जाति (नगदी फसल उगाने वाले) के किसानों को - 'धार्मिक चालाकी' से ऊंचा दर्जा दिया गया। मध्यम वर्ग (ब्राह्मण, बनिया) और पाटीदारों के बीच निचली जातियों को आरक्षण देने के मुद्दे पर 1980 के आसपास ध्रुवीकरण हुआ। 1980 में गुजरात में निचली जातियों के खिलाफ हिंसा की तीव्र वारदातें हुईं। आरक्षण विरोधी आन्दोलन ने ऊंची जाति तथा उच्च मध्यम वर्ग को एकजुट करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। संघ परिवार सीधे या परोक्ष रूप से इस ऊंचे वर्ग के आक्रमण में इनके साथ रहा है।

अपनी चतुर रणनीति से संघ परिवार दलितों के एक तबके को हिंदू समाज के भीतर एक बेहतर स्थान दिला सकने की आकांक्षा के लिये लामबंद करने में कामयाब रहा। यहां गुजरात में सामाजिक घटनाओं ''दूसरों'' (मुस्लिम) के निर्माण को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। यहां पर पहले दलितों से नफरत की जाती थी लेकिन बड़ी चालाकी से इस नफरत को मुसलमानों की तरफ मोड़ दिया गया। इसके लिये दलितों को ''दूसरों'' की तरफ मोड़कर आतंक के वातावरण का निर्माण किया गया और इससे समाज की जातिव्यवस्था को बरकरार रखने में मदद मिली। वि.हि.प. की कई यात्राओं और अभियानों ने इस सामाजिक आधार को मजबूत किया।

सरकार और समित सेन ने अपनी किताब (खाकी शॉर्टस: सैफ्रन फ्लैग) में संघ परिवार आन्दोलन की जड़ों को खोजने का प्रयास किया है। उन्होंने इसे आजकल के पैदा हुए ''जय माता दी'', ''जय संतोषी'' जैसी नई पूजा पद्धतियों या धार्मिक देवियों तथा ''जगराता'' जैसे आयोजनों और ''वैष्णोदेवी'' जैसी नई तीर्थयात्राओं को इससे जोड़ा है। इनकी शुरूआत उत्तरी राज्यों में छठे दशक के उत्तरार्ध और सातवें दशक के पूर्वार्ध में हुई जिसे वि.हि.प. के अभियान के रंग में रंग दिया गया। बसु ने तेजी से बढ़ रहे छोटे-छोटे उद्योग धंधों तथा व्यवसायों में आ रही तेजी के कारण छोटे शहरों में उभर रहे मध्यमवर्गीय तबकों में बढ़ रहे संघ परिवार के सामाजिक आधार को एक महत्वपूर्ण कारण माना है। ये लघु उद्योग इकाइयां इस कदर तेजी से पनपीं कि इक्का-दुक्का इकाइयों में मजदूरों को संगठित कर पाना तथा प्रभावकारी ट्रेड ड्राइवर टेक्नॉलॉजी पर आधारित, (और कहीं से बने बनाये पुर्जे लाकर एक जगह पर जोड़ना) इस तरह उद्योगों का 70-80 के दशक में तेजी से फैलाव हुआ। यह नव मध्यम वर्ग छोटी-छोटी व्यक्तिगत इकाईयों के रूप में काम करने का झुकाव है। उत्तर प्रदेश के कुछ भागों में हरित क्रांति ने ग्रामीण क्षेत्रों में धनी किसानों की क्रय शक्ति को बढ़ाया जिससे शहरी उद्योग धंधों, उपभोक्तावाद तथा व्यापार को तेजी मिली।

आन्दोलन का चरित्र-चित्रण

अधिकांश समाज ने इस आंदोलन के चरित्र को साम्प्रदायिक बताया है। उदार, प्रगतिशील बुद्धिजीवी वर्ग के तबके में अधिकांश लोगों की व्यापक मान्यता है कि यह हिंदू कुलीन वर्ग की सामाजिक और राजनैतिक ताकत को मजबूत करने के लिये संघ परिवार की अगुवाई में चलाया जा रहा एक साम्प्रदायिक आन्दोलन है। इसकी प्रमुख गतिविधि है अपने कार्यकर्ताओं को विभिन्न संगठनों (भा.ज.पा., वि.हि.प., बजरंग दल, स्वदेशी जागरण मंच वनवासी कल्याण आश्रम इत्यादि) को क्रियाशील रखने हेतु सिद्धांतों का प्रशिक्षण देना, जो अल्पसंख्यकों, खास करके मुसलमानों (और आजकल इसाईयों) के खिलाफ साम्प्रदायिक जहर फैलाने का काम खुले आम करते हैं। अब तक संघ परिवार ने समाज, पुलिस, सेना और नौकरशाही में साम्प्रदायिकता का जहर फैलाने में अच्छी खासी 'सफलता' पा ली है। मोटे तौर पर इसे साम्प्रदायिक आन्दोलन कहते हैं।

'धार्मिक राष्ट्रवाद' यह साम्प्रदायिक आन्दोलन का समर्थन करने वाले समाजशास्त्रियों द्वारा किया गया चरित्र चित्रण है तथा इस पर शालीनता का मुलम्मा चढ़ाने का एक प्रयास है। जरगेन्समेयर ने अपनी किताब 'Understanding the Religious Nationalism' में इसे लोकतंत्र तथा समाजवाद, इन दोनों पश्चिमी प्रारूपों की असफलता बताया है जिसके कारण धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रवाद भी असफल हुआ। इसलिये ये लोग धर्म को एक आशावादी विकल्प के रूप में देखते हैं जो उन्हें आलोचना तथा परिवर्तन के लिये आधार प्रदान करता है। इनके अनुसार तमाम धार्मिक नेताओं के बीच मतभेद तो बहुत गहरे हैं लेकिन उन सब में एक बात की समानता है कि वे सभी पश्चिमी धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रवाद को शत्रु मानते हैं और जनता के बीच अपने धर्म के पुनरुत्थान की उम्मीद रखते हैं। जरगेन्समेयर ऐसे आन्दोलनों को मूलतत्ववादी कहने से हिचकते हैं क्योंकि उनके अनुसार यह शब्द ''एक दंभी और संकीर्ण हठधर्मी धार्मिक पोथीनिष्ठा'' को व्यक्त करता है। यह व्याख्या वर्णात्मक कम और अभियोगात्मक अधिक है। इसके अलावा संस्कृतियों की तुलना करने के लिये यह एक अनुपयुक्त व्याख्या है। इस तथ्यात्मक घटना की बेहतर व्याख्या ब्रुस लॉरेन्स ने की है, उनके अनुसार धर्मनिरपेक्ष सिद्धान्तों के खिलाफ यह एक वैश्विक बगावत है जो ज्यादातर आधुनिक समाज के साथ रहता है। इसके अनुसार ''आधुनिक'' वो लोग हैं जो आधुनिकता के मूल्यों का विरोध करते हुए ''आधुनिक'' हैं। इसके अतिरिक्त मूलतत्ववादी कोई राजनैतिक विचार नहीं रखते और समाज और दुनिया के स्वभाव के बारे में व्यापक रवैया रखने के बजाय वे केवल धार्मिक

विश्वासों से प्रेरित विचारों को ही व्यक्त करते हैं। धार्मिक राष्ट्रवाद यह शब्द धर्म और राजनैतिक स्वार्थ के मुख्य अर्थ को व्यक्त करता है और कहता है कि धर्म और राजनीति में कोई स्पष्ट अंतर नहीं हैं और अंतर है भी तो वह पश्चिमी सोच की देन है।

लेकिन यह चरित्र चित्रण इसकी आक्रामकता के विभिन्न व्यापक तथा गहरे पहलुओं को पूरी तरह से समझ सकने में असमर्थ है। इसके अलावा इस आन्दोलन की तीव्रता और दीर्घकालीन स्वभाव को समझा पाने में यह व्याख्या असमर्थ है। इस कमी को पूरा करने के लिये कुछ समाजशास्त्रियों (राम बापट)ने इसे मूलतत्ववादी आन्दोलन करार दिया है जैसा कि ईरान जैसे देश में चल रहा है। इस सूत्र के अनुसार भारतीय मूलतत्ववाद वैश्विक **मूलतत्ववाद** की तरह उत्तर-औद्योगिक समाज में हर जगह व्याप्त है, और यह प्रगत पूंजीवादी या विलम्बित पूंजीवादी व्यवस्था की निर्मिति है।

तीसरी दुनिया के देशों में यह प्रत्यक्ष रूप में होता है जबकि प्रगतिशील देशों में यह गुप्त रूप में होता है। बापट का मानना है कि प्रगतिशील विश्व के जनमत की शक्ति के अभाव में इस सदी के अन्त में, पहली दुनिया के लोग विश्व राजनीति के एजेन्डे में तथा सैनिक उदेश्यों के लिये भी मूलतत्ववाद को सर्वोपरि रखने का हर संभव प्रयास कर रहे हैं। 60 और 70 के दशक में समाजवाद की विजय के साथ राष्ट्रवाद संस्थापित हुआ। इसके बाद आने वाले दो दशकों में पुर्नजागरण और मूलतत्ववाद की शुरुआत हुई। मूल रूप से मूलतत्ववाद अमेरिका में विकसित हुआ जब 1870 और 1930 के बीच पूंजीवाद को संकट का सामना करना पड़ रहा था, उसी तरह दूसरे देशों को भी जब गंभीर आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा तब समाज के कुछ तबकों से मूलतत्ववाद एक प्रतिक्रिया के रूप में उभरा। अमेरिका में मूलतत्ववादी प्रतिक्रिया एक आन्दोलन के रूप में आयी जिसने पुनरूत्थानवादी प्रवाह को अमरीकी नागरिकों द्वारा प्रतिगामी शक्तियों को ग्रहण करने के लिये समर्थ बनाने हेतु धर्म के साथ जोड़ा। बापट एक प्रासंगिक बात बताते हैं कि 1918 से सभी भारतीय राज्यों में महाराष्ट्र सभी किस्म के वाद सनातनवाद, पुर्नजागरण, मूलतत्ववाद और खास करके हिंदुत्व शैली के सम्प्रदायवाद - का उर्वरक क्षेत्र रहा है। मूलतत्ववाद की ही बात लें तो हिंदुत्व लाखों लोगों द्वारा आचरण में लाये जाने वाला हिंदूधर्म नहीं है। यह (हिंदुत्व) एक काल्पनिक हिंदूवाद है। मूलतत्ववाद न तो विचारों के पारंपरिक स्वरूप पर आधारित है और न मौजूदा परंपरा पर आधारित है। वह ''गढ़ी गयी परंपराओं'' के प्रचार के बल पर लोगों को प्रभावित करते हैं। वह आधुनिकता, विज्ञान, प्रौद्योगिकी, सामरिक हथियार और औद्योगिक उत्पादन की उपलब्धियों को ग्रहण करता है। वह मानव के बीच आपसी उदार संबंधों, जो कि उन्हें उनके अधिकारों के लिये संघर्ष की जगह बनाते हैं, के बगैर जीवन के आधुनिक उपकरण चाहता है। संक्षेप में यह एक खास किस्म की आधुनिक संस्कृति हासिल करना चाहता है यानी मानवीय संबंधों में सुधार हेतु उदारमतवाद के बगैर आधुनिक उत्पादन प्रक्रिया। यह उत्तर सामंती घटना है जिसका लक्ष्य है सत्तारूढ़ वर्ग के लिये एक नई पहचान की खोज करना।

यह धार्मिक भाषा का उपयोग करता है। मूलतत्ववाद केवल सेमेटिक धर्मों में संभव है। विगत कई दशकों से हिंदूधर्म की सेमेटिकरण प्रक्रिया जारी है। सेमेटिक हिंदूधर्म जो वास्तव में ब्राह्मणीय हिंदूधर्म है, ने पवित्र पुस्तक के रूप में 'गीता', पवित्र देवता के रूप में 'राम' तथा आचार्यों तथा महन्तों को बतौर ''पुरोहित'' के रूप में स्थापित किया है। इस मूलतत्ववादी आन्दोलन का लक्ष्य है प्राचीन भाषा में कुलीन वर्ग के हितों तथा कार्यक्रमों को वर्तमान में लादना।

हिन्दुत्व	**मूलतत्ववाद**
समाज की उदार नीतियों को अपने हमले का लक्ष्य बनाना।	वही
धार्मिक ग्रंथों से चुने गये पतनशील मूल्यों को समाज पर लादना	वही
स्वदेशी का शोरगुल	साम्राज्यवाद विरोधी शोरगुल
गीता, वेद, राम और आचार्यों पर आधारित निर्माण	सेमेटिक धर्म - पवित्र ग्रंथ, पवित्र देव और पुरोहित पर आधारित
पारंपरिक सनातनी मान्यताओं का राग अलापना	वही
औरत को आदर्श माता के रूप में प्रदर्शित करना।	पिता, पति और पुत्र के पितृसत्तात्मक नियंत्रण में औरत का स्थान
हमारा धर्म ग्रंथ वेद यह ईश्वर निर्मित है।	हमारा पंथ स्वयं भगवान द्वारा प्रेषित पवित्र नियमों -पवित्र ग्रंथों पर आधारित है।
धार्मिक सत्ता के सुनहरे युग की दुहाई	वही
हिंदू संस्कृति की एकरूपता की मांग	बहुलवाद से घृणा करना
समूचे समाज पर सवर्ण मध्यम वर्ग के हित में राजनैतिक दबाव	वही
मुसलमानों को आंतरिक दुश्मन बताकर उनके खिलाफ उन्माद खड़ा करना।	(ईरान के शाह के खिलाफ ईरान में, महिलाओं के खिलाफ सउदी अरब में) उन्माद पैदा करना।
महिलाओं के पहनावे के नियम को महत्व देना।	वही
धर्म के प्रति भावनात्मक अपील करना	वही

बापट का मत है कि संघ परिवार फासिस्ट नहीं है क्योंकि फासीवाद अपने आक्रामक रवैये के लिये धर्म का सहारा नहीं लेता है। इसके विपरीत एजाज अहमद, के.एन.पणिक्कर, सुमित सरकार जैसे कई समाजशास्त्रियों ने संघ परिवार को फासिस्ट करार दिया है। सरकार के अनुसार, हो सकता है कि संघ परिवार का आंदोलन जर्मन फासीवाद के ठीक जैसा न लगता हो, किन्तु उनके नजदीकी संबंधों तथा फर्क को बारीकी से देखने पर उनकी विशेषताओं पर प्रकाश पड़ता है, मिसाल के तौर पर 1992-93 के समय संघ परिवार का आक्रामक रवैया। हिंदू राष्ट्र के अभियान ने हमारे गणतंत्र के समूचे धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक आधार को खतरे में डाल दिया है। यह हिंदू साम्प्रदायिकता है जो भारत में फासीवाद लादने की क्षमता रखती है न कि मुस्लिम साम्प्रदायिकता। सरकार ने इंगित किया है कि इटली और जर्मनी में बहुत सुनियोजित तरीकों (जन समर्थित) से सड़कों पर हिंसाचार, पुलिस, नौकरशाही और सेना में गहरी घुसपैठ और मध्यमार्गी राजनैतिक नेताओं की मौन सहमति से फासीवाद का प्रवेश हुआ। उदाहरण के तौर पर हिटलर, जो बार-बार दावे के साथ यह कहता था कि सत्ता में आने के बाद

भी उसकी पार्टी कानून का सम्मान करेगी, लेकिन इधर उसके साथी गोअरिंग, फासिस्ट जर्मन पुलिस सड़कों पर सुनियोजित मुठभेड़ कराती रही जिसमें 50 से भी अधिक नाज़ी विरोधियों की हत्या की गयी और राइखस्टाग में आग लगा दी गयी जिसके बाद सर्वप्रथम कम्युनिस्ट और तत्पश्चात सभी विरोधी पार्टियों और ट्रेड युनियनों को शीघ्रता से नष्ट कर दिया गया। बाबरी मस्जिद के विनाश के लिये अख्तियार किया गया तरीका काफी हद तक फासीवादी तरीके की याद दिलाता है। सर्वोच्च न्यायालय के आदेश को पूरी तरह से भंग करके तथा प्रमुख विपक्षी पार्टी द्वारा आश्वासन दिये जाने के बावजूद 5½ घंटों में बाबरी मस्जिद ढहा दी गयी और बाबरी मस्जिद के पूरी तरह से नेस्तनाबूद होने तक केंद्र सरकार ने एक उंगली तक नहीं उठाई। उसके बाद देश भर में दंगे हुए, पुलिस का रवैया पक्षपातपूर्ण रहा, कार सेवकों ने उस जमीन पर कब्ज़ा करके वहां पर एक गैरकानूनी ''अस्थायी'' मंदिर बना दिया और इस निर्माण को सुरक्षा प्रदान की गयी जबकि इन सब वारदात के पीछे राजनैतिक ताकत थी। भाजपा इस मामले पर कभी-कभी अफसोस व्यक्त करती है लेकिन ज्यादातर वह समर्थन ही करती रही है, वि.हि.प. ने दिल्ली की जामा मस्जिद को हिंदू स्थल बताते हुए भारतीय संविधान को हिंदू विरोधी घोषित किया। 6 दिसम्बर के दिन पत्रकारों को मारने-पीटने की घटना कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि आम तौर पर पत्रकारों से संभलकर संबंध जोड़कर रखने वाली फासिस्ट ताकतें कभी-कभी डंडे के बल पर दबाव डालना पसंद करती है।

इटली और जर्मनी में फासीवाद एक दशक या उससे कम समय में एक राजनैतिक आंदोलन के रूप में उभरा जब कि हिन्दुत्व को उभरने में अधिक समय लगा जिसके कारण इस आंदोलन को अधिक ताकत और स्थिरता मिली और यह लम्बा समय इस विचारधारा को आम सामाजिक सोच का एक हिस्सा बनाने के लिये पर्याप्त था। सरकार ने ठीक ही कहा कि संघ परिवार का असली आधार मुख्य रूप से हिंदी भाषी क्षेत्र के शहरों तथा छोटे नगरों में उच्च जाति के व्यापारियों तथा व्यावसायिक मध्य वर्ग के बीच रहा है जिसके संबंध देशभर के बड़े जमीनधारक गुटों के साथ विकसित होते रहे। उन्होंने डैनिएल गुरियन द्वारा फासिज़्म की व्याख्या का जिक्र किया है कि ''फासीवाद न सिर्फ बड़े व्यवसायियों की सेवा का एक साधन रहा है बल्कि साथ ही साथ मध्यम वर्ग का गूढ़ परिवर्तक भी रहा है।''

बड़े उद्योगों के साथ फासीवाद के विशेष संबंध विवादास्पद रहे हैं। सुव्यवस्थित प्रचार तंत्र के द्वारा संघ परिवार एक साम्प्रदायिक सामाजिक सोच पैदा करने में सफल रहा है जिसमें श्वेत वंशवाद के समकालीन यहूदियों या काले लोगों की तरह मुसलमानों के प्रति नफरत की भावना पैदा की गयी। संघ परिवार के मुताबिक भारत में मुसलमानों को अनुचित लाभ मिल रहा है। यह आरोप उसी तरह से अनर्गल है जैसा कि जर्मनी में किया जाता था-जहां पर यहूदी काफी कम संख्या में थे और सम्पन्न थे। भारत में, मुसलमानों का व्यवसाय, नौकरशाही, सेना, पुलिस, निजी कंपनियों इत्यादि में कम प्रतिनिधित्व है। यहां पर छद्म धर्मनिरपेक्षतावादियों द्वारा तुष्टिकरण ही मुसलमानों को मिलने वाला कथित लाभ है। जर्मनी के हिटलर की तरह संघ परिवार भी खुद को हिन्दुओं का प्रतिनिधित्व करने का दावा करता है और इस सम्बन्ध में इसकी लोकतांत्रिक विश्वसनीयता सर्वविदित है। उसी तरह चूंकि संघ परिवार ही हिन्दुओं का 'एकमात्र' नुमाइन्दा है इसलिये इसकी विचारधारा के खिलाफ जाने वाला व्यक्ति या तो हिन्दू विरोधी है या फिर छद्म धर्मनिरपेक्ष है। यहूदियों को गैस चैम्बर की यातना मिली लेकिन हिन्दुत्व की विचारधारा उसकी तुलना में ''दयालु और उदार'' इस बात में है कि उन्होंने मुसलमानों को दूसरे दर्जे की नागरिकता की पेशकश की है। लगातार होने वाली मुस्लिम विरोधी हिंसा ने, जिसे सौम्य भाषा में ''साम्प्रदायिक दंगे'' कहा जाता है, बड़ी संख्या में मुसलमानों की आबादी को सिमट कर रहने के लिये मजबूर कर दिया है। इसके अलावा संघ परिवार की पहचान का आधार धर्म है, नाजियों के बारे में ऐसी बात नहीं थी।

ऐजाज अहमद ने इसे हिन्दुत्व फासीवाद कहा है और इसे इटली या जर्मनी के फासीवाद से इस आधार पर अलग करार दिया है कि फासिस्टों की तुलना में ये लोग आर्थिक मुद्दे पर बहुत कम बात करते हैं। उन्होंने राष्ट्र और संप्रदाय की अवधारणा के आधार पर अपनी विचारधारा को गाढ़ा और इस पहचान को हासिल करने के लिए उन्होंने एक राजनैतिक हथियार के रूप में हिंसा का उपयोग भी किया। हिन्दुत्व ने राजसत्ता पर कब्जा पाने के लिए एक साधन के रूप में हिंसा का राष्ट्रीयकरण कर दिया। अहमद के अनुसार जन प्रदर्शन, लामबंदी और रक्तपात का यह सिलसिला रथ-यात्रा से शुरू हुआ। इसने भारतीय सांप्रदायिकता को नया रूप देते हुए भारतीय राजनीति में विभिन्न मात्रात्मक गतिशीलता का सूत्रपात किया, जो यूरोपीय सेमिटिक विरोध जैसा था। संघ परिवार का वास्तविक उद्देश्य मुसलमानों को अपने आधीन में रखने तक ही नहीं है बल्कि अपनी कल्पनानुसार भारत के पुर्ननिर्माण के लिये पूरी राजसत्ता को हासिल करना है और यह समाज पर ब्राह्मणीय प्रकृति की लीक पर एक सजातीयता लादकर सत्ता हासिल करने के लिये है। वर्तमान समय में संघ परिवार की फासिस्ट योजना को लागू कर पाने की कुछ सीमाएं हैं क्योंकि लोगों को प्रभावित कर पाने के लिये यह मौलिक होने का उतना दिखावा नहीं कर सकता और संघ परिवार की सजातीयता को लोग स्वीकार नहीं कर सकते क्योंकि भारत बहुत ही विविधतापूर्ण देश है।

जर्मनी के जॉन ब्रेमन ने संघ परिवार को नाजियों जैसा बताया है। उन्होंने इस बात को इंगित किया है कि हिन्दुत्व को एक ऐसे सामाजिक तबके से जनसमर्थन मिला जिसे पहले की पीढ़ी की तुलना में बेहतर जीवन मिला है। ... दोनों (जर्मन फासीवाद और हिन्दुत्व) इसी में पैदा हुए, और अपने आकार और राजनैतिक वजन में बढ़ रहे इस मिले-जुले मध्यम वर्ग को इसने प्रभावित भी किया। ब्रेमन का कहना है कि छोटे-मोटे फर्क के बावजूद इनमें गहरी समानता है। नाज़ी विचारधारा एक छद्म धार्मिक सिद्धांत के तहत काम करती है जबकि हिन्दुत्व ने अपना सिद्धांत शुद्ध रूप से धार्मिक ही रखा है। हिन्दुत्व की यह धार्मिकता एक व्यापक सामाजिक पुनर्गठन के लिये महज़ एक दिखावा है जबकि अपने मूल रूप में यह बहुत ही भौतिकवादी है। ब्रेमन ने, जिनका जन्म और पालन-पोषण हिटलर के शासन काल में हुआ, बड़ी नजदीकी से हिन्दुत्व की आक्रामकता देखी है क्योंकि उस समय की नाज़ी आक्रामकता का रूप ही तो थी। आंशिक रूप से भी यह हिटलर के शासन काल से काफी समानता रखता है। यहां पर भी एक सम्प्रदाय विशेष को हिन्दू बहुसंख्यक लोगों (या देश) का मुख्य दुश्मन बताया जाता है। नाजी जर्मनी में भी यहूदियों के उत्पीड़न की योजना और अमल पार्टी मशीनरी द्वारा किया गया। हालांकि उनके कुटिल प्रचार ने आगामी हत्याकांड को पूर्ण वैधता दी फिर भी हिन्दुत्व के आक्रामणकारी तत्व मुसलमानों के विरुद्ध हत्याकांड में उनकी भूमिका को छल-कपट से छिपाने का प्रयास बड़ी चतुरता से करते हैं। यह इसलिये संभव है क्योंकि पिता (रा.स्व.संघ)और उनके विभिन्न बेटे-बेटियों के बीच एक चतुरतापूर्ण पारिवारिक काम का विभाजन है। रा.स्व.संघ अपने अनुयायियों को हिन्दुत्व के सिद्धांत का प्रशिक्षण देता है, भा.ज.पा. राजनैतिक शतरंज की चालें चलता है, वि.हि.प. संतों, महंतो और अनिवासी भारतीयों के बीच साम्प्रदायिकता को भावनात्मक रंग देता है, जबकि राष्ट्र सेविका समिति घर के दायरे में रा.स्व.संघ के सिद्धांतों को ले जाने का काम करती है और बजरंग दल इसको सड़क पर हिंसा के रूप में बदलने का काम करता है। यह सब तभी हो पाता है जब इस परिवार के बाकी सभी सदस्य इसके लिये आधार बनाने का काम करते हैं। यह बात स्पष्ट रूप से 1993 में बम्बई और सूरत के दंगों में देखने को मिली। इन दंगों में हिन्दुत्व की ताकतों ने आगजनी के अलावा धर्मनिरपेक्षता के समर्थकों को भी अपना निशाना बनाने का प्रयास किया। लेकिन जर्मनी के यहूदियों की तरह भारतीय मुसलमान बड़े पूंजीपति नहीं थे, इसलिये उनके खिलाफ ''तुष्टिकरण'' और ''विशेषाधिकारों'' का यह कहकर प्रचार किया गया कि इनको बहुत सर पर चढ़ा कर रखा गया है। मध्य काल में उनके राजनैतिक प्रभुत्व और हिन्दुओं पर हुए अत्याचारों से इस आक्रामकता को समर्थन

मिला। ब्रेमन हिन्दुत्व की आक्रामकता को तीव्रता से महसूस करते हैं : ''अहमदिया हिन्दुओं की तरह उन्हें हाशिये पर डाल दो ताकि वे अपने तक ही सीमित रहें, उन्हें नाजी यूरोप में जुडेनवीर्टर की तरह कोने में घेर लो, वे लोग आधुनिक पूर्ण हिंदूमय भारत में अछूतों की तरह अपनी दूषित बस्तियों में घुटकर रहेंगे।''

हिन्दुत्व	**फासिज़्म**
समानतायें	
1. निचली जातियों की एकजुटता के भय से, उत्तर मंडलकाल में मजबूत हुआ	1. मजबूत मजदूर आंदोलन के जागरण काल में उदय और मजबूत होना
2. जन हित के ऊपर 'राष्ट्र' हित को प्राधान्य	2. वही
3. विस्तारवादी बीज का होना, ''अखंड भारत'' (पाकिस्तान, म्यामार, बांगलादेश, श्रीलंका सहित) की अवधारणा	3. विस्तारवादी-पड़ोसी देशों पर इस आधार पर आक्रमण कि पहले कभी वे जर्मन साम्राज्य का हिस्सा थे।
4. इस देश की दुर्दशा के लिये	4. देश की दुर्दशा के लिये यहूदियों को जिम्मेदार ठहराना
5. विगतकाल का उदात्तीकरण	5. वही
6. मजदूरों पर दमन (राष्ट्र के लिये उत्पादन), दलितों पर दमन (योग्यता के आधार पर चुने जाने की मांग द्वारा मंडल रिपोर्ट का धूर्तता से विरोध), महिलाओं पर दमन (उन्हें हिन्दू संस्कृति के अधीन रहना होगा)	6. यहूदियों पर दमन (उनको खत्म कर देना), कम्युनिस्टों मजदूरों पर दमन (उनकी ताकत घटाने के लिए उनपर जानलेवा हमले करना), महिलाओं पर दमन (उनकी जगह रसोईघर और चर्च में है, वे केवल बच्चों के पालन करें, उन्हें संस्कार दें)
7.बाबरी मस्जिद के विनाश के बाद उनकी आतंकवादी तथा मानवाधिकार विरोधी गतिविधियां और अतिराष्ट्रवादी उन्माद उजागर हुआ	7. जन उन्माद पैदा करके अपनी विध्वंसात्मक गतिविधियों को अमल में लाया।
8 .इनका मुख्य जनाधार : शहरी मध्यम वर्ग, छोटे पूंजीपति और धनी किसान, उच्च तथा पिछड़ी जातियों के कुछ हिस्सा	8. मुख्य सामाजिक आधार:शहरी मध्यम वर्ग तथा भूस्वामी कुलीन वर्ग
अन्तर	
1. पनपने में लंबा समय: गोभक्त हिंदी भाषी क्षेत्रों के साम्प्रदायीकरण में सफलता। मंडल आयोग के बाद उच्च वर्णियों के ध्रुवीकरण में सफलता।	1.यहूदी विरोधी लहर पर तेजी से पनपा।
2. आठवें दशक के मध्य में मध्यम वर्गों का सामाजिक संकट : महंगाई, बेरोज़गारी, बढ़ती हुई गरीबी	2.विश्वयुद्ध के बाद का संकट

फासीवाद और संघ परिवार की समरूपता की व्यापक और आलोचनात्मक दृष्टि से व्याख्या करते हुए अचिन वनाइक फासीवाद के सिद्धांत का उपयोग हिन्दू राष्ट्रवाद के सिद्धांत के विश्लेषण के लिए करते हैं। वनाइक महसूस करते हैं कि समूचे राजनैतिक जमघट में विशेषकर तीसरी दुनिया में हिन्दू राष्ट्रवाद को समझने के लिये केवल फासिस्ट उदाहरण नाकाफी हैं। पहले उनकी असमानताओं को लें - संघ परिवार में करिश्माई नेतृत्व का अभाव, खासकर उदारवाद या लोकतंत्र विरोधी और मजदूर वर्ग विरोधी नीति की दिशा में किसी निर्देश का अभाव, इत्यादि। वनाइक कहते हैं कि हालांकि फासिस्ट संगठन समाज के सभी वर्ग के लोगों को आकर्षित कर सकता है लेकिन यह बहुवर्गीय राजनैतिक संगठन या आन्दोलन नहीं है। यह लोकप्रिय सर्वसत्तावाद का भी रूप नहीं है। फासीवादी संगठन सैद्धांतिक और राजनैतिक आधिपत्य इसलिये जीतता है क्योंकि उसकी निर्णायक जीतें गैर सैद्धान्तिक क्षेत्रों में ही हासिल होती हैं। उनका जोर आर या पार जैसा निर्णायक होता है। वे तेजी से उभरते हैं लेकिन जब उन्हें सत्ता नहीं मिलती तो वे जल्दी समाप्त भी हो जाते हैं। उत्तर औपनिवेशिक समाज में धार्मिक मूलतत्ववाद या धर्म आधारित राष्ट्रवाद की राजनीति उतनी संभावनायें होने या न होने पर भी कामयाब हो पाती है। जबकि भारत में फासिस्ट राज्य के लिये हिन्दू राष्ट्रवादी होना आवश्यक है लेकिन हिन्दू राष्ट्रवादी राज्य के लिये फासिस्ट होना आवश्यक नहीं।

अपने प्रस्तुतीकरण में वनाइक फासीवाद के वर्ग के आधार पर मौन हैं। यह उन्हें हिन्दू राष्ट्रवाद की विशेषता के अनुरूप वास्तविक चरित्र अपनाने को बाध्य करता है। राष्ट्र का विश्लेषण करते हुए वनाइक बड़ी बारीकी से वर्ग विश्लेषण से हटते हुए भौतिकवादी समझ को अलग रखकर आदर्शवाद की बैसाखी अपना लेते हैं कि-विगत 15 वर्षों में....सांस्कृतिक दंभ और विदेशी द्वेषवाद का नाटकीय उदय हुआ है.....। हम चार तरह के रूपों को देख रहे हैं जिनका राजनैतिक एकाकीपन हुआ है.....धार्मिक मूलतत्ववाद.....हिन्दू राष्ट्रवाद.....प्रथम विश्व में प्रजातिवाद.....और विदेश, द्वेषवाद का विस्तार। वनाइक इन सभी घटनाओं को वैश्विक बदलाव के संदर्भ में जोड़कर देखते हैं और महसूस करते हैं कि पहचान की राजनीति ने वर्गीय राजनीति को बहुधा मात दे दी है। वे इस आंदोलन, राजनैतिक मूलतत्ववाद की राजनीति को फासीवाद नहीं मानते, बल्कि केवल फासीवादी संभावना मानते हैं। वे इसे भारतीय जातिगत समस्या का रूप मानते हैं जो फासीवाद के मूल का नहीं है।

चर्चा :

कोई जरूरी नहीं कि सामाजिक प्रभाव के क्षेत्र में विभिन्न विचार आपस में बिखरे हों। प्राथमिक स्तर पर संघ परिवार के साम्प्रदायिक स्वभाव का प्रभाव एकदम स्पष्ट है। धार्मिक लगाव का इसका मूलभूत चरित्र आसानी से देखा जा सकता है। संघ परिवार की राजनैतिक जड़ों को आपस में लगातार जोड़कर देखने से इसका सही राजनैतिक चरित्र-चित्रण किया जा सकता है।

फासीवाद से ही हम शुरू करें तो यह समाज के एक बहुत बड़े तबके के द्वारा अस्तित्व में आया और इसके गंभीर परिणाम हुए। फासीवाद के शीर्ष को समझना आवश्यक है। फासिज़्म के बारे में कई स्तर पर विश्लेषण किया जा सकता है। मार्टिन किचेन ने इसके बारे में एक सारगर्भित व्याख्या करने का प्रयास किया है कि यह उदार मूल्यों को नकारने वाला, राष्ट्र की संप्रभुता को मुख्य आवश्यकता के रूप में प्रक्षेपित करने वाला, मर मिटने की भावना के उदात्तीकरण, तानाशाहों की अधिसत्ता राज्य की प्रभुसत्ता के

सामने व्यक्तियों के अधिकारों पर नियंत्रण करने वाला अति सनातनी आन्दोलन है। सामाजिक न्यूनता के लिये दोषी व्यक्ति की पहचान करना, सामाजिक मानासिकता को आतंकित करना और मानवाधिकारों को तिलांजलि देना इसकी प्रवृति है। इसके सिद्धांत और सामाजिक आन्दोलन की सामाजिक पृष्ठभूमि संपत्तिधारी वर्ग द्वारा गरीबों के असंतोष को आतंकित करने के लिए है, और यह पृष्ठभूमि है भीषण गरीबी, मुद्रास्फीति, कुपोषण और बेरोजगारी, जहां पर गरीबों का विद्रोह जन्म लेता है। गरीबों के विद्रोह के साथ भूस्वामी वर्ग के एक तबके के अलावा मध्यम वर्ग तथा बेरोजगारों तथा विभिन्न सामाजिक आंदोलनों (तीव्र फासीवाद की स्थिति में संगठित मजदूर वर्ग) का भी साथ होता है। फासीवाद के आक्रमण का मुख्य लक्ष्य मानवाधिकार होता है। (जर्मन फासीवाद के मामले में ट्रेड यूनियनें) और इसका शीर्ष होता है भयभीत मध्यम वर्ग। यूरोप में फासीवाद एक प्रलय के रूप में आया जिसने थोड़े समय में ही समाज को जकड़ लिया।

संघ परिवार को दशकों पहले सैद्धांतिक आधार मिला। तभी से उसका सैद्धांतिक गठन और मजबूती का काम जारी है। शाखाओं के विशाल जाल और राजसत्ता के प्रशासकीय तंत्र में मौजूद उनके अनुयायियों के बावजूद वे 80 के दशक तक वे एक सामाजिक ताकत नहीं थे। 80 के दशक में पिछड़ी जातियों में अशांति और आंदोलन का माहौल रहा, जिसके प्रतिक्रिया स्वरूप सारे देश में दलित विरोधी दंगे हुए। 1980 में गुजरात में हुए दलित विरोधी दंगे इसका स्पष्ट उदाहरण है। धनी किसान वर्ग का गठन और छोटे उद्योगपति एवं शहरी मध्यम वर्ग के गठन की उस दोहरी प्रक्रिया ने 80 के दशक में अपनी मौजूदगी जताई। इन तबकों का संघ परिवार के आंदोलन में सहभाग कई कारणों से उभरा। इसका एक मुख्य कारण था मंडल आयोग, जिसने फासीवाद के मुख्य समर्थकों (धनी किसान, छोटे उद्योगपति और मध्यम वर्ग के कुछ तबकों) को साथ-साथ जोड़ा। इन सभी को निचली जातियों तथा गरीबों के संघर्ष से खतरा था इसलिये वे संघ परिवार के साथ जुड़ गये।

संघ परिवार के लिये समाज की निचली जातियों और गरीब तबके पर खुलकर आक्रमण कर पाना संभव नहीं था। यहां पर एक शातिर चालाकी की गयी। इसके शीर्ष फासीवाद समर्थकों को अपने विशेषाधिकारों और सामाजिक स्थिति की सुरक्षा का विकृत भय था और उनका वास्तविक लक्ष्य था दलितों, गरीबों, मजदूरों और महिलाओं को उनकी 'जगह' बताना और 'जैसे थे' की परिस्थिति को बरकरार रखना (और यह समाज के उदार मूल्यों के रहते खुले आम कर पाना संभव नहीं था)। पिछले कुछ दशकों से आरक्षण को घटिया ठहराने के लिये और आरक्षण से लाभान्वित लोगों को नीचा दिखाने के लिये एक सुव्यवस्थित अभियान शुरू किया गया। इसके अलावा वे गरीब किसानों तथा मजदूरों के अधिकारों का समर्थन करने वालों से नफरत करते हैं। खास तौर पर इस बीच उभर रहे छोटे उद्योगपतियों के कारण मजदूर उनकी नफरत का केंद्र बन रहे हैं। महिलाओं के अधिकारों को लेकर होने वाले आंदोलन के कारण उच्च जाति के पुरुषों पर भी विपरीत प्रभाव पड़ा है। मोटे तौर पर यह तो कहा ही जा सकता है समाज के इस तबके में असुरक्षा की भावना भर गई है इस जटिल वर्ग/जाति लिंग के दृश्य में मध्यम वर्ग और मोटे तौर पर उच्च जाति के हिन्दू पुरुष किसी समर्थक राजनैतिक आंदोलन, किसी सिद्धांत की तलाश में थे जो इन तबकों का दमन कर सकें, क्योंकि ये तबके उनकी सामाजिक और राजनैतिक ताकत के लिये खतरा बन रहे थे,लेकिन पूरे विश्वभर में उदार नीतियों के प्रभाव और विकास के कारण यह दमन संभव नहीं है। जातिविहीन समाज, लैंगिक समानता और मानवाधिकारों के प्रति केवल दिखावटी बातों से काम नहीं चल सकता। उच्च/जति के लोग मानवाधिकारों से नफरत करते हैं फिर भी या तो उन्हें (अ) ऐसे संघर्ष पैदा कर सकने वाले हालात पर से लोगों का ध्यान हटाना या (ब) वैकल्पिक मूल्यों वाली व्यवस्था का प्रचार करना था जो इनकी स्थिति का सीधे-सीधे विरोध न करें और जो इन दावों की तीव्रता को निष्क्रिय करने के लिये खुद के फायदे वाले सिद्धांतों का प्रचार करें। हिन्दुत्व इस काम में एकदम सटीक बैठता है। एक तरफ यह विगत इतिहास को लेकर हताश और अभागे मुसलमानों के रूप में काल्पनिक दुश्मन का निमार्ण करता है, जिससे नफरत की जाए और बार-बार हिंसक तरीके से लड़कर उन्हें सिमटकर रहने के लिये मजबूर कर दिया जाए। इस प्रक्रिया को बहुत ही तीव्र उन्मादपूर्ण तरीके से किया जाता है और इस आक्रमकता के सामने शोषित तबके की अन्य वास्तविक संघर्षशील आवाजें दब जाती हैं। दुश्मन (मुसलमान) के चित्रण को ही इतिहास बनाकर जन चेतना को दूषित करते हुए इसे ऐसे स्तर तक ले जाना जहां पर शत्रु-विरोध को निचली जाति के शूद्रों तक विस्तारित किया जा सके। यह सारा प्रयास इसलिये है कि मुसलमानों और निचली जातियों में नफरत पैदा की जा सके और इस उद्देश्य से कि एक को दूसरे से लड़ाया जा सके । ''सामाजिक प्रक्षोभ'' की इस प्रक्रिया से पूरे समाज में इस कदर आतंक का निर्माण किया गया कि वह उदार नीति तथा उसके संग शोषित वर्ग के संघर्ष को भी दमन करने का एक सर्वोत्तम तरीका बन गया।

हिन्दुत्व की ''योग्यता'' दूसरे स्तर पर भी है कि शेष सभी (मुसलमान /ईसाई) को छोड़कर बाकी बचे लोगों को हिन्दू माना गया है। उन्हें सजातीय हिन्दू समाज के रूप में चित्रित किया गया है जिसमें उन्हें समाज के लिये निर्धारित धर्म का पालन करना होगा। वे वर्तमान यथावत समाज के समर्थन में सजातीयता और सद्भावना की अवधारणा का प्रचार इसलिये करते हैं क्योंकि इससे मौजूदा शक्ति-समीकरण को लाभ मिलता है। यह प्रमाणित किया जाता है कि यह वर्ण विहीन समाज है, जातिगत राजनीति समाज को विभाजित करती है और ऐसे समय पर जब जातिगत राजनीति का लाभ निम्न जातियों को मिल सकता है, यह बताया जाता है पिछड़ी जातिवालों को जाति की मानसिकता से ऊपर उठना चाहिए। औरतों को माता, बहन, पत्नि और बेटी का 'सम्मानपूर्वक' दर्जा दिया गया है जबकि ये रिश्ते पितृप्रधान समाज में बुरी तरह शोषित हैं। मजदूरों को राष्ट्र के लिये उत्पादन का काम करना होगा यानी मौजूदा शोषण और अन्यायपूर्ण कानून का समर्थन, वरना देश का नुकसान होगा। राष्ट्र निर्माण में शोषण करने के लिये मालिकों के अबाधित अधिकार को मौन समर्थन प्राप्त है।

इस तरह हिन्दुत्व के राजनैतिक निर्माण में ऊँची जाति के पुरुषों के हितों में इससे बेहतर राजनैतिक कार्यक्रम नहीं हो सकता। यूरोपीय फासीवाद एक प्रलय जैसा था जबकि भारतीय फासीवाद पुराना और धीमे चलने वाला है। यह आवेगों में आता है और हर बार हसकी उत्तेजना खुद की एक व्यापक एकजुटता छोड़ जाती है। हर बार इसकी आक्रमकता ''दूसरों'' को असहाय और सीमित कर देती है। इस तरह का सीमित करना ब्राह्मणीय वर्चस्व और हिन्दुत्व के आधिपत्य के लिये आवश्यक है। ब्राह्मणीय वर्चस्व के लिये मुसलमानों को सिमटकर रहने के लिये मजबूर कर देना आवश्यक है, जैसा सदियों पहले अछूतों के बारे में हुआ था।

वनाइक की ''न्यूनतम फासीवाद'' की शर्तों के अनुसार अपने सार में हिन्दुत्व फासिज्म है, इसका शीर्ष और वर्ग चरित्र इस आंदोलन के चरित्र को तय करता है भले ही वह विरोध में हो या सत्ता में हो। फासीवाद का न्यून उच्च मध्यम वर्ग है। हिन्दुत्व का शीर्ष धनी किसान, छोटा उद्योगपति और मिलाजूला मध्यमवर्गीय तबका (नौकरशाह, व्यावसायिक, व्यापारी इत्यादि) होता है जो बड़ी पूंजी से जुड़ा होता है। इसकी बाह्य अभिव्यक्ति स्थान और समय के अनुसार बदल सकती है। फासीवाद और हिन्दुत्व का सामाजिक आधार एक ही है। हिन्दुत्व कम प्रखर और पुराना है जबकि फासीवाद जाति मुक्त और उत्तर औपनिवेशिक समाज की प्रक्रिया है।

यूरोपीय फासीवाद की तुलना में हिन्दुत्व में कहाँ अलग है? सामाजिक गतिशीलता के बदलाव के दशकों पहले से ही रा.स्व.संघ के सिद्धांत और

सदस्यता के आधार पर हिन्दुत्व सामाजिक सत्ता के लिये खतरा बन चुका था। इस दौरान कई लोग व्यक्तिगत रूप से इस राजनीति की तरफ झुक गये। दूसरी तरफ फासीवाद के ही परिवर्तित रूप में हिन्दुत्व ने इस तबके की सामाजिक धारणा को अधिक निरन्तरता और नियोजित तरीके से अपनी तरफ मोड़ लिया। इसने अपने समर्पित अनुयायियों को सेना, प्रशासन, पुलिस, प्रसार माध्यम और शिक्षा के क्षेत्र में दशकों पहले से ही घुसाना शुरू कर दिया ताकि इस सामाजिक क्षेत्र में हिन्दुत्व के आगमन के लिये एक आसान रास्ता बन सके।

तीसरे, संभवत: उपरोक्त कारणों से, यूरोपीय फासीवाद की तरह हिन्दुत्व ने ''समाजवाद के मूल सिद्धांत के आडम्बर'' का प्रयोग नहीं किया। मूल सिद्धान्त के दिखावे का न होना हिन्दुत्व की ताकत है क्योंकि सत्ता पाने के बाद छोटे क्षेत्रों, राज्य या राष्ट्र में मूल सामाजिक परिवर्तन को लागू करने की जरूरत नहीं रहेगी। एक तरह से हिन्दुत्व फासीवाद का अधिक संगठित स्वरूप है क्योंकि इसके अपने कार्यक्रम को लागू करने के लिये मूलतत्व के आडम्बर का सहारा नहीं लेना पड़ेगा। इस देसी फासीवाद की एक और सूक्ष्म समस्या है। अकथित उत्तर-दक्षिण विभाजन। हिन्दुत्व की अवधारणा मुख्य रूप से उत्तर भारतीय उच्च वर्णीय पुरुषों में व्याप्त है। इस नेतृत्व को अहिन्दी भाषी क्षेत्र में सफलता हासिल करना अभी बाकी है। धनी किसानों और हिन्दुत्व के दूसरे बढ़ते हुए सामाजिक आधार के चलते, अहिन्दी भाषी क्षेत्र में भी इस आंदोलन को पैर जमाने में कुछ सफलता मिलने की उम्मीद है। लेकिन संभवत: इसका विस्तार बहुत छोटा ही रहेगा।

हिन्दुत्व का लक्ष्य

हिन्दू राष्ट्र धार्मिक राष्ट्र नहीं है, यह समाज के सभी तबकों पर पूर्व-आधुनिक सामाजिक श्रेणीबद्धता लादने वाली एक ''आधुनिक'' प्रक्रिया है। यह समाज के एक तबके का लक्ष्य है जिसे विगत कुछ दशकों से हो रही विकास प्रक्रिया का लाभ मिलता रहा है। हिन्दुत्व समाज के उस तबके का लक्ष्य था जिसे स्वतंत्रापूर्व काल में हो रहे सामाजिक परिवर्तन से खतरा हो रहा था और यह तबका (जमींदार-ब्राह्मण) यथावत स्थिति का समर्थक और आर्थिक तथा राजनैतिक स्तर पर अंग्रेजों का सहयोगी था। विगत दो दशकों से समाज को यथावत रखनेवालों के विरुद्ध लड़ाई का नारा देने वाले महिलाओं, मजदूरों, दलितों और आदिवासियों के तबके को 'हिन्दू राष्ट्र' द्वारा निगल लिये जाने का खतरा बना हुआ है। यह समाज के उस तबके का आक्रमण है जिसे लघु उद्योगपतियों, छोटे व्यावसायिकों और ''हरित-क्रांति'' वाले किसानों द्वारा व्यापक एवं अधिकतम लाभ मिला है। भारतीय राष्ट्रवाद एक सकारात्मक अवधारणा है जिसके अंतर्गत विभिन्न धर्म, विभिन्न जातियताओं तथा संस्कृतियों का समावेश है जो विश्व अर्थव्यवस्था तथा उभरते वैश्वीकरण का अभिन्न अंग है।

इस आंदोलन की धीमी गति इसकी मजबूती है। एक तरफ यह सामाजिक स्थिति को काबू में रख सकती है तो दूसरी तरफ इसकी प्रतिक्रिया को भी बाहर आने दे सकती है। दलितों, मजदूरों, महिलाओं और मध्यम वर्ग में धर्मनिरपेक्ष तबकों का भारतीय राष्ट्रवाद के प्रति सकारात्मक रुख हिन्दुत्व की राह में बड़ी बाधा है। बड़े पूंजीपतियों और प्रमुख औद्योगिक घरानों का संघ परिवार से अनोखा रिश्ता है। वे जब भी कभी खुद के अस्तित्व के संकट में फंस जाते हैं तब संघ परिवार से अनोखा रिश्ता है। वे जब भी कभी खुद के अस्तित्व के संकट में फंस जाते हैं तब संघ परिवार द्वारा निर्मित सामाजिक आतंक उन्हें बड़ी चालाकी से उदार नीतियों के बंधन से बाहर कर देता है। संघ परिवार का रुढ़िवादी आंदोलन पूंजीपतियों की जरूरतों को सफलतापूर्वक अबाधित रूप से पूरी करता है। इस तरह यह पुराना, लचीला फासीवाद अलग-अलग अस्तित्व के रूप में कभी (गरीबों और अल्पसंख्यकों को) आर्तकित करके, तो कभी (पड़ोसी दुश्मन देशों के प्रति) आक्रामक बन कर तो कभी खुद के अंतर्विरोध के चलते चरमराकर ढह जाने से संघ परिवार के जरिये व्यक्त होता है। लेकिन यह गति जारी रहती है। हिन्दुत्व की सामाजिक जड़ें शोषक पूंजीपति शासन के समर्थन और निरंतरता के लिए बनी हैं, जो अपने लक्ष्य के प्रति आगे बढ़ते हुए मध्यवर्गीय आकांक्षाओं को पूरा करती है।

हिन्दुत्व आक्रामकता को मूलतत्ववादी अवधारणा से भी समर्थन मिलता है। वह पुराने विचारों को छांट कर वर्तमान पर लादता है। वह धार्मिक प्रतीकों का इस्तेमाल करता है, हिन्दू राजाओं के पुराने ''सुनहरे युगों'' का बखान करता है, महिलाओं को पितृसत्तात्मक नियंत्रण में रख कर उनके जीवन, पहनावे को निर्धारित करता है। वह विभिन्न धार्मिक समुदायों, व्यक्तियों को अपने साथ मिलाकर अपना राजनैतिक आधार मजबूत करता है और राष्ट्र-उन्माद पैदा करने के लिये वह धर्म का बहुत प्रभावशाली तरीके से इस्तेमाल करता है।

इस समय परिस्थिति काफी संतुलित है। इसकी आक्रामकता ने उत्तर में अच्छा खासा प्रभाव पैदा किया है लेकिन दक्षिण और पूर्व में तुलनात्मक रूप से इसका उन्मादी प्रभाव नहीं पड़ा है। बिखरे होने के बावजूद दलितों की प्रतिक्रिया निश्चित रुप से हिन्दुत्व की रथयात्रा का रोड़ा बनी हुई है।

संघ परिवार के स्पष्ट लक्ष्य मुसलमान मजबूरी के बंधन में बंधे हैं। एक तरफ वे हिन्दुत्व की आक्रामकता से इस कदर टूट चुके हैं कि अब वे चुप नहीं बैठेंगे। दूसरे वे अपने ही पिछड़ेपन के कारण उनकी रहनुमाई का दावा करने वाले मुस्लिम दकियानूसी तथा धार्मिक नेताओं की गिरफ्त में जकड़े हुए हैं। वे हिन्दू फासीवाद और मुस्लिम मूलतत्ववाद की दोहरी मार झेल रहे हैं। ''गरीब मुसलमानों'' द्वारा झेली गयी यातनायें इतनी अधिक हैं कि बहुत संभव है कि वे लोग अपने दकियानूसी नेतृत्व को दरकिनार कर, बाहर आने के लिये मजबूर हो जाएं और संघ परिवार के संकट का खुलकर मुकाबला करें और उनका यह रुख निश्चित रूप से ''हिन्दुत्व के त्रिशूल'' की बाधा बनेगा। संघ परिवार इस समस्या से किस तरह निबटता है और अपने नये ''नरम रुख'' द्वारा इस बाधा से किस तरह निजात पाता है यह अभी देखना बाकी है।

हिंदू राष्ट्र और धर्म निरपेक्ष लोकतांत्रिक भारत की तुलना

हिन्दू राष्ट्र धर्म	धर्म निरपेक्ष लोकतांत्रिक भारत
यह कल्पना हिन्दू महासभा और रा.स्वं.संघ को, जो स्वतंत्रता आंदोलन का भाग नहीं थे, लक्ष्य के रूप में सामने आई।	यह कल्पना स्वतंत्रता संग्राम के दौरान, स्वतंत्रता के आंदोलन में हिस्सा लेनेवालों (कांग्रेस, भगत सिंह जैसे क्रांतिकारी, सुभाष चंद्र बोस, डॉ. अंबेडकर और कम्युनिस्ट पार्टी) के लक्ष्य के रूप में सामने आई।
शुरुआत में इस कल्पना को ब्राह्मणों, बनिया और जमींदारों का समर्थन मिला।	इसके मुख्य समर्थक थे गरीब किसान, मजदूर, दलित और आधुनिक उद्योगपति।
इस कल्पना को हिन्दुत्व के नेताओं, सावरकर-गोलवलकर ने अंतिम स्वरूप दिया।	इस कल्पना का सर्वसामान्य जनता द्वारा चुनी हुई संविधानसभा द्वारा निर्मित भारतीय संविधान में मुख्य स्थान है।
यह राष्ट्रवाद नस्ल, धर्म, और 'दूसरों' की नस्ल या धर्म की घृणा पर आधारित है।	देश की विविधता और भौगोलिक-राजनीतिक बहुलता का, प्रेम के आधार पर जोड़ने पर आधारित है।
उच्चभ्रू लोगों के लिये विशेष स्थान का प्रावधान	कानूनी तौर पर सबको समान अधिकार।

जाति, वर्ग और लिंग भेद की ''जैसे हैं'' की हालत को मजबूत है।	शोषित-दलित समूहों के अधिकारों के संघर्ष की वैधता को मंजूर करता करता है।	मूल्य समाज के अधिकृत, मुख्यधारा के मूल्य होंगे।	राजनीतिक जीवन का मार्गदर्शन करेगा।
समाज का नेतृत्व हिंदू पंडित-आचार्य, महंत और खुद को हिंदूओं का प्रतिनिधि घोषित करनेवाले लोग करेंगे।	सामाजिक जीवन लोगों, समूहों के अंतलिन से तय होगा।	सबको हिंदू (ब्राह्मणीय) मूल्य और संस्कृति के अनुसार रहना होगा।	समाज को अपनी-अपनी संस्कृति के अनुसार जीने की स्वतंत्रता होगी।
पूरे समाज को उच्चभ्रू वर्ग के मूल्य संस्कृति अपनानी होगी।	बहुलता का स्वागत, अनेक विचारों के लिये स्थान।	यह कल्पना मुसोलिनी के इटली, हिटलर के जर्मनी, खोमेनी के इरान और तालिबान के अफगानिस्तान से मिलती है।	समानता, स्वतंत्रता और बंधुता के मूल्य और उदारमतवादी समाज।
वोट देने का अधिकार स्वयंघोषित हिंदुओं धर्म के नेताओं और प्रति-निधियों द्वारा तय किया जाएगा, यानी संघ परिवार द्वारा।	सबको वोट देने का अधिकार। जाति, लिंग भेद के बगैर सबको समान नागरिक अधिकार	हिंदू उच्चभ्रू और अन्य समाहित उच्चभ्रू का देश में वर्चस्व होगा और वे दूसरों का 'मार्गदर्शन' करेंगे।	सब लोग राजनीतिक, सामाजिक प्रक्रिया में समान योगदान देंगे।
ब्राह्मणीय मूल्य, उच्चभ्रू सांस्कृतिक	भारतीय संविधान सामाजिक और		

लोकतांत्रिक भारत या हिंदूराष्ट्र-रामपुनियानी से साभार

पृष्ठ 16 का शेष .....

कि लोगों और समुदायों को जोड़ने वाले प्रतीकों, रूपों और पक्षों की अनदेखी या उससे दूरी आखिरकार विकास और बदलाव की प्रक्रियाओं को प्रभावी और निरंतर रूप दिये जाने में बड़ी रूकावट है। इस कड़ी में अगस्त 2004 में रांची के बाद नवम्बर में लखनऊ में उत्तर प्रदेश में सक्रिय कोई दो दर्जन सामाजिक संगठनों के साथ सात दिवसीय गंभीर चिंतन-मनन का शिविर आयोजित हुआ। शिविर के साझीदार इन जैसे सवालों से गुजरे कि संस्कृति से हमारा क्या मतलब है? साझी संस्कृति विरासत के क्या और कैसे रूप या पक्ष है? क्या हर संस्कृति बुनियादी तौर पर साझी होती है या कि कोई ऐसी संस्कृति भी होती है, जिसे गैर साझा कहा जा सकता है? साझा विरासत से इशारा क्या है? क्या साझी विरासत का हर कोना सुंदर और काबिले कुबूल है? साझी विरासत किस तरह समुदायों के बीच एका करती है और उसकी क्या जरूरत है? उस पर कैसे खतरे हैं और हमलावर चेहरे कौन हैं, किस भेस में हैं और उनके इरादे क्या हैं? साझी विरासत को कैसे बचाया जा सकता है? कैसे उसकी पद-प्रतिष्ठा की बहाली की जा सकती है? वगैरह-वगैरह।

शिविर में समझ बनी कि संस्कृति को सामाजिक व्यवहारों और तौर-तरीकों के उस समुच्चय की शक्ल में समझा जा सकता है जिसमें हमारा ज्ञान, मूल्य मान्यताएं, रीति-रिवाज, नैतिकता, कायदे-कानून, जीवन शैली के अलावा ऐसी सभी क्षमताएं और आदतें भी शामिल होती हैं जो हमें समाज का हिस्सा होने के नाते मिलती हैं। किसी खास समाज की संस्कृति और आदतें भी शामिल होती है, जो हमें समाज का हिस्सा होने के नाते मिलती हैं। किसी खास समाज की संस्कृति को समझने का बेहतर तरीका यह है कि उसकी जीवन शैली, सांस्कृतिक उत्पादों और नैतिक मूल्यों पर एक साथ नजर डाली जाये। इन तीनों अवधारणाओं का समुच्चय ही संस्कृति है। कोई व्यक्ति इस पर तभी अमल कर सकता है, जब वह उस समाज का हिस्सा हो, अलग-थलग रह कर यह मुमकिन नहीं। इसलिए संस्कृति किसी की बपौती नहीं, बल्कि किसी समाज या समूह की परिघटना हुआ करती है। जब हम सांस्कृतिक विरासत की बात करते हैं तो आम तौर पर हम अतीत की संस्कृति के उन पहलुओं का जिक्र कर रहे होते हैं, जो हमारे पास या तो मौजूद हैं या हमारे लिए अहमियत रखते हैं। इसमें पहनावा, खानपान, रीति-रिवाज़, सामाजिक व्यवहार के विविध पक्ष और रूप, लोक संस्कृति के विविध आयाम जैसे लोक गीत, लोक नृत्य, लोक नाट्य, लोक चित्र, लोक-शिल्प, लोक आख्यान या कि सौन्दर्य शास्त्र से लेकर आदर्श, अच्छे-बुरे के मानक जैसी नीतिशास्त्रीय अवधारणाएं तक शामिल हैं। आगरा का ताजमहल, दिल्ली का कुतुब मीनार या कि लखनऊ की भूलभुइलय्याँ हमारी साझी विरासत हैं, वैसे ही जैसे भाषा-बोली, कहावतें और प्रतीक। एक साथ भोजन करने की हमारी संस्कृति साझी विरासत है, इसकी अभिव्यक्ति लंगर-भंडारे से पंगत तक में देखी जा सकती है। बेटी, भात और जनवासा से लेकर साझी विरासत का विस्तार तीज-त्योहारों, खेल-खिलौनों, मेलों और सूफी सन्तों की मजारों और दरगाहों तक में देखा जा सकता है। कितनी ही रामलीलाओं में अहम किरदार मुसलमान निभाते हैं और कितने ही हिंदू मोहर्रम में ताजिया उठाते हैं। दूर क्यों जायें, लखनऊ में अगर पाठकजी की मस्जिद बनी, तो खान साहब का शिवाला भी बना। साझी विरासत में आज़ाद, भगत सिंह और अशफाकउल्ला की साझी शहादत भी शामिल है लेकिन आज इस विरासत को दफन करने और शहीदों को उनकी जाति-धर्म के मुताबिक बांटने का घिनौना खेल जारी है। बामियान में बुद्ध की मूर्ति गिरती है तो पूरी दुनिया जैसे स्तब्ध रह जाती है। इसलिए कि यह सिर्फ बुद्ध की मूर्ति का जमींदोज़ हो जाना ही नहीं था, बल्कि सैकड़ों साल पहले की अद्भुत रचनाशीलता और उसके पीछे के अचरज भरे साहस की जिंदा तस्वीर का धूल में मिल जाना था। कहते हैं कि कण-कण में राम व्याप्त हैं इसलिए दुख की अभिव्यक्ति से लेकर अभिवादन तक में राम हैं। लेकिन मंदिर वहीं बनायेंगे। ऊधमी और खतरनाक ज़िद देखिये कि राम-नाम की मिठास पर जय श्रीराम की तल्खी काबिज होती जा रही है। राम-नाम साझी विरासत है जबकि जयश्रीराम भगवा गिरोह का ताजा ब्रांड। राम की परंपरागत छवि में धनुष उनके कांधे पर बस लटक रहा है लेकिन जयश्रीराम की तस्वीर में धनुष की प्रत्यंचा हमेशा के लिए तान दी गई है- अल्पसंख्यकों के साथ ही दलितों और आदिवासियों के भी खिलाफ। देश की बड़ी आबादी गरीबी, भुखमरी और बीमारी की गिरफ्त में है। कदम-कदम पर लोगों के लोकतांत्रिक और मानव अधिकारों का हनन और अपहरण जारी है, कल्याणकारी योजनाओं और विकास का हाल बुरा है। दूसरी तरफ संस्कृति के अनपढ़ सिपहसालार हिंदी-हिन्दू-हिन्दुस्तान के उजड्ड और हमलावर नारे का तीर साध कर लोगों को बांटने और बुनियाद सवालों को पीछे कर देने की खतरनाक मुहिम पर है।

आज सभी लोकतांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष और बहुलतावाद में विश्वास रखने वाली ताकतों की ज़िम्मेदारी है कि वे साझी विरासत के पक्ष में खड़े ही न हों बल्कि उसे महफूज़ रखने में भी अपनी पूरी ताकत लगायें।

नसीबन

कहानी

-डॉ. योगेश भटनागर

आज बीस दिन बाद दिन का कर्फ़्यू खुला तो मटिया महल (जामा मस्जिद के दक्खिनी दरवाज़े से शुरू होता एक मुहल्ला)में रहने वाले दिल्ली हाईकोर्ट के सीनियर काऊंसलर ज़हीर अली देहलवी झट से मौलाना आज़ाद मेडिकल कॉलेज के एम.एस.डॉ.सफ़ाया से मिलने निकले। इसी कॉलेज में हमेशा चिड़िया की तरह चहकने और फुदकने वाली उनकी इकलौती शब्बो ऑल इंडिया टेस्ट क्वालीफ़ाई करने के बाद पिछले दो साल से एम.डी (गाइनिक) कर रही है। रिक्शे में बैठते ही ज़हीर अपनी यादों के समंदर में समा गये थे। उनको याद आ रहा था उस रात के दो बजे का वक़्त जब शब्बो अचानक घर आयी और खुरशीद के कंधे से लटके देर तक रोती रही। उनकी खुद की हिम्मत नहीं हुई शब्बो से कुछ भी पूछने की। उसे नॉर्मल चाल में अपने बेडरूम की तरफ जाते देख मुतमईन हुए और खुदा का शुक्र किया।

अगले दिन से ही फिर चौबीस घंटों का कर्फ़्यू लग गया और ये बीस दिन शब्बो ख़ामोश बैठी खिड़की से बाहर देखती रहती, न कुछ बोलती, न कहती। कभी-कभी तो घर और बाहर की ख़ामोशी इतनी बेकाबिले बर्दाशत हो जाती थी कि वो तीनों सिर जोड़े देर तक रोया करते और दुआ करते, ''खुदा इन बंदों को अक्ल दे।'' पिछले 6 दिसंबर के बाद अब पुरानी दिल्ली में अक्सर कर्फ़्यू लग जाता है। और तो और इस बार ईद भी कर्फ़्यू में मिलनी पड़ी थी।

इस ईद ने ज़हीर के जहन में मुल्क के तकसीम होने के उन मनहूस दिनों की याद फिर से ताज़ा कर दी थी: उन दिनों जब भी कर्फ़्यू खुलता तो बच्चों को गोदी में उठाने, औरतों के रोने और मर्दों के गले मिलने के साथ-साथ आवाज़े आतीं - पहुँचते ही ख़त लिखना, पता जरूर भेजना, अपनी खाला को न भूल जाना, लखनऊ वाली फूफी मिलें तो आदाब अर्ज़ करना, खुदा हाफ़िज, जीते रहो, आबाद रहो-वगैरह वगैरह। फिर घरों में ताले लगने और ताँगों के जाने की आवाज़ें धीरे-धीरे ख़ामोशी में गुम हो जाती थी। कर्फ़्यू फिर से लग जाने के बाद दस साल के ज़हीर, उनके अब्बू और अम्मी अपने सिर जोड़कर रोते और खुदा से दुआ करते - इन बंदों को अक्ल बख़्श। क्यों ये अपना वतन छोड़कर जा रहे हैं? पागल हैं, जो न देखा है, न जाना है, उस पर भरोसा कर रहे हैं। यह यादों का सिलसिला आज ऐसा चला कि वो हमेशा की तरह तुर्कमान गेट के बाहर उनके पुराने क्लास फैलो राधेश्याम के दही बड़े खाने भी भूल गये। जाने यह यादों की लहरें कबतक थपेड़ती रहतीं अगर रिक्शे वाले ने न कहा होता - वकील साहेब, कॉलिज आ गया। इस रास्ते को भी आज ही जल्दी खत्म होना था!!

ज़हीर रिक्शा वाले को जल्दी से पैसे थमा तेज़ी से एम.एस. के कमरे की तरफ चल पड़े। पहुँचते-पहुँचते साँस फूल गया था। गाल लाल हो गये थे। सलाम किया और बैठ गये। उसी बेचैनी की हालत में शब्बो का हाल बताया। यह भी बताया कि अक्सर अपनी रीडिंग टेबल पर बैठे ख़ामोश बाहर छोटे-छोटे सफेद बादलों को अपनी शक्ल बदलते देखती रहती है। कभी-कभी कुछ भी पूछने पर रोना शुरू कर देती है, चिल्लाना शुरू कर देती है। बिना किसी बात के गुस्से में आ जाती है। यही नहीं कभी-कभी तो पाजामे कुर्ते के ऊपर अपनी कमर के नीचे अपने ही बुर्के को लपेटकर पैर ऊकुडूं करके बैठ जाती है। अपनी अम्मी तक को हाथ लगाने नहीं देती।

डॉ. सफाया ने कहा-उस रात मेरा उनसे कुछ पेशन्ट्स को लेकर माइनर-सा आर्ग्यूमेंट हुआ था पर ऐसा नहीं कि इतना सीरियस रिपरकशन हो जायेगा। डॉ. देहलवी को आप राममनोहर लोहिया हॉस्पीटल (आर.एम. एल.) के न्यूरोलोजिस्ट प्रोफेसर टन्डन को दिखाइये। घबराने की कोई बात नहीं है। उनके नाम एक ख़त भी दे दिया।

रिक्शा करके घर आये। घर में घुसे तो वही कचोटने वाली उदासी और कब्रिस्तान सी ख़ामोशी। ज़हीर को लगा जैसे वो सब किसी जबर्दस्त सैलाब में फंस गये हों। डूबते जा रहे हों और जो भी पानी के ऊपर आता हो वही बाकी दोनों के पेट में जाने वाले पानी के बुलबुलों की आवाज़ सुनता हो। इस बार ज़हीर जब पानी के ऊपर आये तो लगा उनकी प्यारी शब्बो की आवाज़ नहीं आ रही है और खुरशीद उनके कंधों में लटकी डूबने से बचने की कोशिश में उनको भी पानी के अंदर घसीटे लिये जा रही है। दूर-दूर तक किनारा दिखाई नहीं दे रहा था। क्या हम सभी डूब जायेंगे?! इसी सोच में पसीना-पसीना ज़हीर शब्बो के पीछे उसके कंधे पर हाथ रखकर खड़े हो गये। ख़ामोश शब्बो बादलों की आँखमिचौनी देखती रही। थोड़ी ही देर में अपने दोनों हाथों से अब्बू का सीधा हाथ पकड़ रोने लगी। उन्होंने सिर्फ़ उसका कंधा थपथपाया और अपने कमरे में चले गये। खुरशीद बावर्चीखाने से भागी-भागी आयी और पूछने लगी क्या हुआ था शब्बो को? क्यों आ गयी थी उस रात हॉस्पीटल से?
ज़हीर ने सब बताया और कहा कि शब्बो को आर.एम.एल. हास्पीटल ले जाना होगा।

अगले दिन कर्फ़्यू खुला तो खुरशीद और ज़हीर आर.एम.एल. हास्पीटल में प्रो. टन्डन के वार्ड नं0-6 में शबनम को ले गये। खत दिया और सारा हाल बताया। उन्होंने शबनम के कंधे पर हाथ रखकर साथ-साथ चलते हुये कहा-''आईये ब्रदर डॉक्टर, कन्सलटींग रूम में बैठ कर बात करेंगे।'' बस इतना कहना था ''हाथ मत लगाईये। पागल हो गये हैं क्या आप?'' शबनम ने चिल्लाकर कहा।

''सॉरी डॉक्टर, देहलवी। मीट माई एस.आर. डॉ. दिव्या माथुर।''
शबनम ने मेरी तरफ देखा और साथ चल दी। प्रोफेसर टन्डन ने कहा, ''दिव्या, मेक दी केस पेपर्स।'' मैंने तो ज़हीर साहेब ने जो कहा था वो पूरा लिख दिया और उनको दे दिया। उन्होंने लिखा - ''पार्सींग थ्रू ए सीवीयर न्यूरोटिक डिप्रेशन।''

हम तीनों करीब एक घन्टे बाद कन्सलटींग रूम से बाहर आये। दस दिन के बाद फिर बुलाया। प्रो. टन्डन ने ज़हीर को मर्ज़ बताया और कहा कि शबनम का बोलना बहुत ज़रूरी है। खुरशीद को हिदायत दी कि वो शबनम को कभी अकेला न छोड़े। जितना ज़्यादा हो सके अस्पताल और कॉलेज की बातें करें।

इसी तरह तीन सिटींग्स हो गयीं। तीन महीने गुज़र गये। बीच-बीच में कर्फ़्यू लग जाने से शबनम की दो सिटींग्स मिस हो गयीं थीं।

लू वाली गर्मी शुरू हो गयी थी। आजकल तो रात-रात भर गर्म हवा चलती है वैसे पानी और बिजली की किल्लत ने इस साल की गर्मी ज़रा ज़्यादा ही गर्म कर दी थी। कहने को तो कहते हैं सारी दुनिया गर्मा रही है अब। पुरानी दिल्ली में तो अब हर मौसम गर्म लगता है।

आज शबनम कुछ पहले से ताज़ा और खुश दिख रही थी। मुझे लगा कि अपने आप रिकवरी के रास्ते पर आ गयीं हैं। प्रो. टन्डन ने भी उसके चेहरे की ताज़गी महसूस की तब ही शायद वो कन्सलटींग रूम की सीटिंग के बाद धीरे-धीरे चलते हुये और बातें करते हुये शबनम को गाइनिक वार्ड में ले आये। मैं समझ रही थी कि आज सारी सीचुईशन रिक्रिएट हो रही है।
शबनम वार्ड में घुसी ही थी कि चिल्लाने लगी, ''ये पेशन्ट्स किसने एडमिट किये हैं।'' डॉ. टन्डन ने उसे ऐसा झकझोरा जैसे नींद से जगा रहे हों। शबनम की ख़ामोशी का बाँध अब टूट चुका था। अपने मोटे-मोटे आँसुओं में से शबनम समझ गयी थी कि वो कहाँ है। हमें भी इसी फ्लैश का इन्तजार था। टन्डन साहेब उसके कंधे पर हाथ रखे हुये अपने कन्सलटींग रूम में ले आये, बैठाया और कहा-माई चाइल्ड, आई वान्ट टू ट्रीट यू। प्लीज़ कोऑपरेट।

शबनम ने रोते-रोते कहा, ''सर, मैं जानती हूँ मेरा इलाज स्ट्रेस रीलिज़ ही है।'' और फिर शबनम ख़ामोश हो गयी। मैं देख रही थी प्रो. टन्डन को। उनको लगा कि अगर अभी कुछ न किया गया तो मरीज़ ट्रओमा में चला जायेगा। जल्दी से उठे। उसके सामने जाकर बैठ गये, ''गो ऑन डॉक्टर मैं सुन रहा हूँ।

और उसके बाद शबनम ने बताया: उस दिन उसकी एमर्जेन्सी थी। कई दिनों बाद सुबह से आधी रात का कर्फ़्यू खुला था। रात नौ बजे अचानक सुबकती, सिसकती, और कोसती हुई करीब पन्द्रह औरतों और लड़कियों को लेडी पुलिस उसके वार्ड में ले आयी। किसी की उम्र बारह साल, किसी की चौदह, एक की उम्र पैंतालिस और उसके साथ उसकी 20 साल की लड़की और सबसे पीछे एक 60 साल की बुढ़िया। सभी रेप केसेस !! सभी के नाम रबीना, सकीना, यास्मीन, नसीबन या कुछ ऐसे ही। वो वार्ड में सबके एम.एल.सी. (मेडिको-लीगल केसेस)बना रही थी। इतने में लोकल एम.पी. धर्मराज के साथ एम.एस. आये। दोनों के मुँह से शराब की दिल दहलाने वाली बदबू आ रही थी। एम.एस. रोज़ शाम को पीते हैं यह किसी से भी छुपा नहीं था। एम.एस. ने उससे कहा कि उन पेशन्ट्स को एडमिट न करे। यह ख़बर जब अखबार में छपेगी दंगे और भड़क जायेंगे। पार्लियामेन्ट में जवाब देना पड़ेगा। फौरन डिस्चार्ज़ करने को कहा।

शबनम ने कहा जब उसने ये सुना तो वो देखती रह गयी। वो औरतें और लड़कियाँ एक सदमे और ट्रओमा में थीं और उनकी आँखें जैसे कह रहीं थीं: डॉक्टर, हमें डिस्चार्ज़ मत कीजिये। भेड़ियों के सामने दोबारा मत फेंकिये। इससे पहले कि वो कुछ करती या कहती धर्मराज ने उसके कान में कहा - डॉक्टर, मान जाओ। हम लोग यहाँ बोसनिया बना देंगे। हस्पताल कम पड़ जायेंगे। डॉक्टर ढूँढ़ने से नहीं मिलेंगे और फिर तुम जैसे नामों वाले डॉक्टर हैं ही कितने? और फिर भद्दी सी हैं हैं हैं की हँसने की आवाज़ उसने सुनी।

इतना सुनते ही वह वार्ड से निकल कर अपने कमरे की तरफ तेज़ी से भागी। पीछे-पीछे धर्मराज और उसके साथी वही बातें दोहरा रहे थे। कह रहे थे - ''इनका ख़ून ही बदल देना चाहिये। सभी पाकिस्तान के एजेंट हैं। क्रिकेट की टीम उनकी अच्छी, ड्रामे उनके अच्छे, गाने वाले उनके अच्छे, टी.वी. उनका अच्छा। जब देखो उन्हीं की तारीफ़। इतना ही अच्छा लगता है तो क्यों नहीं चले जाते वहीं, रहेंगे भी यहीं और तारीफ़ करेंगे इस्लामाबाद की। फिर कहा डॉक्टर, वो मरीज़, अपने-अपने घर भेज दिये गये हैं। याद करो वही अपनी पाकिस्तानी फ़ौज जिसने दिसम्बर 1971 में दस दिन में एक लाख बंगलादेशी औरतों का रेप किया था। आ...ज तक ज़िन्दा हैं वो औरतें।''

जब शबनम ने यह कहा तो मेरे और टन्डन साहेब के रोंगटे खड़े हो गये थे। मैं सोच रही थी औरत पैदा होना कितना ख़तरनाक है? ये आदमी समझता क्या है अपने आपको?। शबनम ने फिर कहा: इतना सुनते ही वो भागकर अपने होस्टल में घुस गयी। अपने रूम को अन्दर से बंद कर लिया। पसीना-पसीना हो गयी थी। धर्मराज आधी रात तक उसके कमरे के नीचे खड़ा वही सब दोहराता रहा। उसके जाने के एक घन्टे बाद वो अपने कमरे से निकली और रिक्शा कर घर पहुँची। ''मुझे या...द है...आज भी'' इतना कहकर वो फिर ख़ामोशी की बेहोशी में जाने लगी। मैं तो बिल्कुल हिपनोटाईज़्ड हो चुकी थी। तभी डॉ. टन्डन ने चिल्लाकर कहा-दिव्या शेक हर। डोंट लेट हर स्लाईड डाऊऊऊन। दिस इज़ द मोमन्ट। मैंने शबनम का हाथ दबाया जैसे उसे दिलासा दे रही थी। तभी टन्डन साहेब ने कहा, ''वैसे भी अगर जावेद मियाँ दाद अच्छे खिलाड़ी हैं, या इकबाल बानो अच्छा गाती हैं, उनके ड्रामे अच्छे होते हैं तो क्यों न तारीफ़ करें।'' मुझे लगा कि यह कहने में उन्होंने अपनी प्रोफेशनल ड्यूटी परफार्म की है उसमें बिलीव नहीं करते। और फिर कुछ भी कहना तो आसान होता है न!

शबनम ने जैसे कुछ सुना ही नहीं, वो अपनी बात कहे चली जा रही थी-कभी ख़त्म न होने वाली बातें । अब जो उसने कहा था उसमें अपने से नफ़रत और अपने में खीझ और चिड़ भरी हुई थी-क्यों उस रात वो उन्हें एडमिट करने से घबरा गयी? क्यों प्रोटेस्ट नहीं कर पायी? बहुत करते उसको भी नसीबन ही बना देते न। फिर थोड़ा रुककर कहा, ''सर, सभी जानते हैं सब मुसलमान तो हमलावरों की औलाद नहीं हैं । सबको पता है 70 परसेन्ट मुसलमान तो नीच जाति के हिन्दू ही हैं जो ऊँची जाति वालों के जुल्मों से तंग आकर उनसे बचने के लिये मुसलमान हो गये थे, कुछ ईसाई या बौद्ध भी हुए। पर मीनाक्षीपुरम, नैली और भिवन्डी आज भी होते हैं। और तो और मेतियों ने अब पंगालों (मणीपुरी मुसलमान)को भी मारना शुरू कर दिया है। वहाँ जहाँ ज़्यादातर नीच जाति के हिन्दू मुसलमान हुए हैं, वहीं मुसलमानों पर हमले बढ़े हैं ...। सर, सरकार ने दंगों में मरने वालों, घायल या मकान या दुकान जल जाने या लुट जाने का मुआवज़ा तय किया हुआ है। मुआवज़ा देने के बाद सरकार फिर अगले मौके का इन्तजार करती है। पर देखिये न सर ... फिर ख़ामोशी। मैं नोट कर रही थी अचानक शबनम की ख़ामोशी ने जैसे टन्डन साहेब को जगाया हो, ''कहो, कहो शबनम मैं सुन रहा हूँ।''

''पर सर सरकार ने रेप का तो कोई मुआवज़ा आज तक तय नहीं किया न ही कोई रिहबिलिटेशन सेन्टर है या स्कीम्स है।''

शबनम फिर रुकी जैसे अपनी रुलाई रोकने की कोशिश कर रही हो। मैंने उसको एक गिलास पानी पिलाया। घड़ी की तरफ देखा शबनम को बोलते हुये एक घन्टे से भी ज़्यादा हो गया था। उसका बी.पी. बढ़ रह था। डॉ टन्डन की आँखों में झाँकते हुए शबनम ने फिर कहना शुरू किया - ''सर, सब जानते हैं। हम मुसलमानों में पढ़ने-लिखने का चलन बहुत ही कम है। ज़्यादातर हम लोग छोटे-छोटे पेच, बटन या नानखटाई हैं। अब तक काफी तो दंगों से तंग आकर दिल्ली छोड़कर सऊदी चले गये हैं। इस बार तो बम्बई, सूरत, अहमदाबाद और बड़ौदा में बरसों से बसे हज़ारों जुम्मन मियाँ अपने मुल्क कटक, मुरादाबाद या ऐसे ही किसी ''बाद'' को वापिस चले गये हैं।''

टन्डन साहेब को लगा जैसे शबनम रो पड़ेगी पर वो नहीं रोई। उन्होंने कहा, ''ठीक ही तो कहती हो, शबनम। कर्फ़्यू और दंगों का मुसलसल जारी रहने का मतलब है कि रोज़न्दारी पर जीने वाले भूखे मर जायेंगे। इसीलिये ज़्यादातर आदमी अपनी ज़िन्दगी भर की कमाई एजेन्टों को देकर हिन्दुस्तान छोड़ गये हैं या अपने वतन भाग आये हैं।''

शबनम को अच्छा लगा टन्डन साहेब उससे एग्री करते हैं उसने कहा -

''आप ही बताइये आपने कभी पढ़ा है किसी अहमद या अली का नाम 15 बड़े इन्डस्ट्रीयल हाउसस के नामों में। आर्मी या नेवल चीफ़ की बात छोड़िये, देखे हैं आपने लेफ्टिनेंट जनरल, सुप्रीम कोर्ट या हाईकोर्ट के चीफ़ जस्टिस या आई.जी. पुलिस, जिनका नाम कोई अली, मियाँ या हुसैन हो? हमारे पढ़े लिखे लोग तो प्रेजीडेन्ट और मिनीस्टर होकर सब जिम्मेदारियों से फ़ारिग हो गये हैं ....।''

शबनम की आवाज़ में अब लाचारी और अकेलापन सुनाई पड़ रहा था पर वो कहे जा रही थी-''सच तो यह है, सर, कि हम मरदूद नीली स्याही के लाखों ठप्पों में बदलकर रह गये हैं। हम एक पतंग के पुंछल्ले हो गये हैं जो उसे तेज हवा में चढ़ने और टिके रहने देते हैं। हर बार कौम को नसीबन बनाया जाता है ...हर बार...।''

मैंने देखा कि गुस्से में शबनम कभी चुन्नी से पसीना पोंछती या हथेली में रूमाल दबाती। उधर प्रोफेसर टन्डन तो बिल्कुल हिपनोटाइज़्ड हो चुके थे। बुत से बने देख रहे थे और शबनम की हर बात में हामी भरा सर हिला रहे थे। मैं लिखे जा रही थी। मैं जानती थी कि इस सेशन के फौरन बाद टन्डन साहेब केस पेपर्स माँगेंगे। ताज़ुब तो यह था कि शबनम चिल्ला-चिल्लाकर कर बोल रही थी और गुस्सैल टन्डन साहेब छोटे बच्चे की तरह जैसे कोई कहानी सुन रहे हों-चुपचाप सुन रहे थे। वो कह रही थी इतना सब हुआ, सर, एक कम्बख़्त खान मिनिस्टर ने इस्तीफ़ा नहीं दिया, कोई माई का लाल फटका नहीं मटियामहल में, कोई इमाम गया नहीं बम्बई। और तो और अभी दंगों का चालीसवां भी नहीं हुआ था कि लीडराने कौम ने वज़ीरे-आज़्म हिन्द में अपने भरोसे का फिर से पुरज़ोर इज़हार किया। जानते हैं किसी की भी रूह ने क्यों बल्वा नहीं किया??
''क्यों?''
''क्योंकि हमारी कौम के पढ़े लिखे नचइय्ये और गवइय्ये हो गये हैं। एक राजा की गुहार में तारीफ करते नहीं अघाते और दूसरी नयी-नयी थिरकन से आलमपनाह का मन बहलाने में पीछे नहीं रहते।''
''और?''
''और साजिन्दे हो गये हैं अनपढ़ गरीब। जिनका काम सिर्फ़ लय और ताल में मेल बनाये रखना है। सिर्फ़ यही काम पुश्त दर पुश्त करते आ रहे हैं हम सब।''

शबनम थोड़ा रुकी फिर रोते-रोते कहने लगी-सर...आज वो सारी औरतें और लड़कियाँ हम्ली होंगी और एम.टी.पी. के वख़्त से पार जा चुकी होंगी। क्या फ़र्क है इनमें और उन बंग्लादेश की औरतों में? सिर्फ़ इतना ..सिइइ...र्फ इतना सा है ... सर, उनके पेट हमलावरों की देन हैं और इनके पेट जो इन्हें हमलावरों की औलाद कहते हैं। इतना कह कर शबनम हिचकियाँ ले लेकर रोने लगी।

मैंने केस पेपर्स मेज़ पर रख दिये। शबनम के कन्धों पर हाथ रखा, उन्हें दबाया। शबनम रोये जा रही थी। मुझे भी रोना आ रहा था। मैं कमरे से बाहर भाग गयी और दरवाज़े के पीछे खड़ी होकर रोने लगी। उधर हिचकियों के बीच शबनम कह रही थी-मुझे लगता है कि मेरा, धर्मराज और एम.एस. का गुनाह एक ही है-रेप-मैंने ख़ामोश रहकर किया है। उन्होंने बोल, कहकर किया है।

प्रो. टन्डन ने शबनम को एक गिलास पानी पिलाया। बाहर आये और मुझसे कहा ''होल्ड ऑन दिव्या, आई केन लुक ऑफ्टर वन एट ए टाईम। हिम्मत से काम लो। ऐसे बहुत से केसेस आयेंगे।'' मैंने फिर लिखना शुरू किया। वो कह रही थी, ''सर, मैं जहाँ भी जाती हूँ वहीं पेट की तरफ मुड़े हुए दोनों पैरों के बीच दोनों हाथ दबाये मासूम रबीना, बूढ़ी फ़ातिमा और 12 साल की नसीबन की मज़बूर आँखें, उनकी कराहती आवाजें, मेरा पीछा करते हैं। मुझे रातों में सोने नहीं देते।'' इतना कह कर शबनम फिर ख़ामोश हो गयी।

प्रो. टन्डन ने हमें बताया था कि ऐसे मरीज़ को बोलने की फुल फ्रीडम देनी चाहिए। वो खुद अपने थौट्स सिनक्रोनाइज़ नहीं कर पाता। उसे क्या कहना चाहिए, क्या नहीं यह भी नहीं पता होता। वो नहीं जानता कि वो एक ही बात कितनी बार दोहरा चुका है। इतना याद रखना चाहिये कि मरीज़ को यह न पता लगने पाये कि डॉक्टर उसकी बात नहीं सुन रहा है अदरवाईज वो वायलेन्ट हो सकता है। उन्होंने शबनम से कहा - ''तुम तो जानती हो, डॉक्टर, अगर तुम इस डिप्रेशन से निकलने की कोशिश नहीं करोगी तो इलेक्टरो कन्वलसिव थिरेपी के अलावा कोई रास्ता नहीं रह जायेगा और वो हर साल छह महीने में रिपीट करनी पड़ती है। मेरी मानो अपनी यहीं ट्रान्सफर करा लो। मेरे साथ सिटींग्स करो और अपना एम. डी.भी। दिव्या भी साथ रहेगी।''

शबनम की ख़ामोशी टूटी उसने अपनी भर्राई हुई आवाज़ में कहा : नहीं सर, मुझे अब एम,डी. वगैरह नहीं करनी है। डरती हूँ कहीं उन्हीं में से किसी की डिलीवरी न करनी पड़ जाये?! मैं ऐसी घिनौनी ज़िन्दगी अपने हाथों से नहीं दे सकती।

मुझे लगा उन्होंने एक आखिरी कोशिश की-''शबनम, अगर तुम अपने को इस लहर में बह जाने दोगी तो मेनिएक डिप्रेशन में जा सकती हो, ऐसा भी हो सकता है कि तुम मेडिकल रिपेयर के बाहर हो जाओ।''

शबनम की बेज़ार और गुनहगार सी मोटी-मोटी आँखें प्रो. टन्डन के ऊपर कहीं दूर देख रही थी। मैंने देखा उसके होंठ कुछ फड़फड़ाये, लगा जैसे नसीबन कह रहें हों। फिर अपने सिर को दोनों हाथों से पकड़ा। मेज़ के काले शीशे में ख़ामोश अपनी शक्ल देखती रही। थोड़ी देर में शबनम ने सिर उठाया और कहा -''सर, मैं ...मैं वही शबनम हूँ जो रोज़ सुबह हरी-हरी घास पर मोतियों की लड़ी-सी चमकती हूँ और अपनी चन्द मिनटों की ज़िन्दगी में मुझे ही अलफ नंगे-नंगे पैरों से रौंदने वालों की आँखों की रोशनी में इज़ाफा करती हूँ। नसीबन, यास्मीन और रबीना भी तो अपनी-अपनी तरह से शबनम ही तो हैं!!! इतना कह शबनम ऐसे उठी जैसे उसको ख़बर ही नहीं कि वो घर में है या बाहर। उसे अपनी चुन्नी की सुध नहीं थी, साँस ज़ोर-ज़ोर से चल रही थी और कुछ बड़बड़ा रही थी। ज़हीर समझ गये थे। मैं उन्हें शबनम को अपने दोनों हाथों में लपेटे लिये चले जा रहे देखती रही। इधर टन्डन साहेब बच्चों की तरह ज़िद कर रहे थे, ''शबनम, रुक जाओ। यहाँ एडमिट हो जाओ।'' पर उसने सुना नहीं। ऐसा लगा जैसे उनके लोअर लिम्बस पेरालाईज़्ड हो गये हों और अपनी बेबसी और लाचारी पर गुस्सा रहे हों।

उस दिन से आज एक महीना हो गया वो कभी-कभी चिल्ला कर कहते हैं-''शबनम रुक जाओ। एडमिट हो जाओ। आई विल ट्रीट यू...।'' या फिर अक्सर बड़बड़ाते हैं, नसीबन, यास्मीन,पेट में घुसे घुटने। कभी तो कुछ भी समझ नहीं आता कि क्या कह रहे हैं। उनकी हिस्ट्र शीट में लिखा है, ''पासिंग थ्रू ए सीवीयर न्यूरालॉजिकल डिप्रेशन ।''

दिव्या यह सब बता रही थी और रो रही थी। फिर उसने कहा -''मैं अक्सर टन्डन साहेब से बातें करती रहती हूँ। अकेला नहीं छोड़ती। डर है कहीं वो भी शबनम न हो जायें।'' मैं डॉ. ईश्वर नाथ (गाइनिक) भौचक्का-सा अपनी होने वाली बीवी को देखता रहा...कहीं ये भी तो...? पर नहीं यह सच नहीं हो सकता!

भाजपा और सांप्रदायिकता

-डॉ. योगेश भटनागर

1998 के बाद छः वर्षों में, जो कि भा.ज.पा. के केंद्र में सत्ता में रहने के वर्ष भी हैं, आडवाणी भा.ज.पा. के पांचवें अध्यक्ष हैं। कुशाभाऊ ठाकरे को छोड़कर कोई भी अपना कार्यकाल पूरा नहीं कर पाया। फिर भी उन्हें दूसरा कार्यकाल नहीं दिया गया। वैसे ही बाबरी मस्जिद के ध्वंस के बाद मुरली मनोहर जोशी को दूसरा कार्यकाल नहीं दिया गया बल्कि तब भी आडवाणी ने खुद अध्यक्ष पद भार संभाल लिया था। जना कृष्णामूर्ति को अवधि पूरा होने से पहले ही हटा दिया गया। अध्यक्ष बनने के फौरन बाद भा.ज.पा. की रांची में हुई राष्ट्रीय कार्यकारिणी परिषद की बैठक में वाजपेयी ने एक बार फिर दावे से कहा कि हिंदुत्व और भारतीयता पर्यायवाची हैं। उन्होंने ये भी कहा कि इस मामले में उनमें और आडवाणी में कोई मतभेद नहीं है।

मई 2004 के बाद से लगातार चुनावों में हार रही भा.ज.पा. पर, कहने को तो आर.एस.एस. और वि.हि.प. का 'घर वापिसी' 'जड़ों पर वापसी' यानि हिंदुत्व पर, वापसी के लिये काफी दबाव है पर सच तो यह है कि भा.ज.पा. ने हिंदुत्व कभी छोड़ा ही नहीं था। हिंदुत्व और भारतीयता को पर्यायवाची शब्दों के रूप में इस्तेमाल करना भा.ज.पा. का सिर्फ एक शाब्दिक छल है जो राजनैतिक औचित्य (पॉलिटिकल करेक्टनेस) से प्रेरित है। आर.एस.एस. के विचारकों: हेडगेवार, गोलवालकर और एच.वी.शेषाद्रि के विचारों का अगर विश्लेषण करें तो समझ में आ जायेगा कि असलियत में भारतीयता और हिंदुत्व में कोई फर्क नहीं है।

एम.एस. गोलवालकर के 'बंच ऑफ थॉटस' को अगर ध्यान से पढ़ें तो साफ ज़ाहिर होता है कि संघ परिवार की भारतीयता की अवधारणा हिंदूराष्ट्र की अवधारणा ही है। गोलवालकर का कहना है-भारत एक हिंदूराष्ट्र है। उनके लिये राष्ट्रवाद को हिंदुत्व से अलग करने का सवाल ही नहीं उठता। आज़ादी के बाद भी गोलवालकर की इस अवधारणा में कोई परिवर्तन नहीं आया। आर.एस.एस. के संस्थापक हेडगेवार की अवधारणा को उद्धृत करते हुये गोलवालकर ने कहा ''राष्ट्रीयता का मतलब है हिंदू (पृ.134)।'' ''अगर दोनों शब्दों का अलग-अलग रूप में प्रयोग किया जाये तो इसका मतलब होगा हिंदू अपने आप को इस देश के कई समुदायों में से एक मानेंगे जबकि हिंदुओं को समझ लेना चाहिये कि वे ही इस देश के असली नागरिक हैं। यह कहकर हम इतिहास को एक संकीर्ण दृष्टि नहीं दे रहे हैं लेकिन यह कह रहे हैं कि हिंदू ही इस देश की सन्तान हैं।''(पृ.122)

आर.एस.एस. और इसके विचारकों ने भारत को कभी बहुधर्मीय, बहुसमुदायी, बहुल और धर्मनिरपेक्ष देश माना ही नहीं। आर.एस.एस. की विचारधारा भारत को सिर्फ हिंदूराष्ट्र मानती है। जहां तक और समुदायों का सवाल है इनका मानना है उन सबको हिंदू संस्कृति, हिंदू दर्शन और हिंदू नायकों के प्रति निष्ठा और वफादारी रखनी होगी। भारत एक हिंदू राष्ट्र है इसके तर्क के पक्ष में गोलवालकर का कहना है कि हिंदुओं की अपनी एक सांस्कृतिक परम्परा है जो एक समान जीवन दर्शन से उपजी है (पृ.164)। दूसरी बात ये संस्कृति वर्षों से एक जीवंत परम्परा है और आखिरी बात, हिंदू संस्कृति और हिंदू भारत की मिट्टी से उपजे हैं - इस्लाम और ईसाई हमलों के कहीं पहले। यहां एकीकृत जीवन की धारा हिंदू थी और इसीलिये भारत में राष्ट्रीय जीवन हिंदूराष्ट्र जीवन है। (पृ.164) क्योंकि एक हिंदू ही सही मायनों में राष्ट्रीय है इसलिये गोलवालकर का कहना है कि वो कभी सांप्रदायिक हो ही नहीं सकता। क्योंकि अगर हिंदू 'राष्ट्रीय' है तो भारत के राष्ट्रीय जीवन के मूल्य हिंदू जीवन से ही उपजते हैं (पृ.165)। पर फिर सांप्रदायिक क्या है? गोलवालकर कई तरह की सांप्रदायिकता की बात करते हैं और उन सबमें एक बात जो समान है वो ये है कि हिंदू मूल्यों के सिवा किन्हीं और जीवन मूल्यों के प्रति निष्ठा का अभाव। मुस्लिम और ईसाइयों के अलावा जो दूसरे 'विदेशी' हैं या गैर हिंदू हैं उनमें नव बौद्ध और सिक्ख भी आते हैं। उसका कारण बताते हुए गोलवालकर कहते हैं कि हालांकि 'ये संप्रदाय हिंदूइज़्म से ही निकले हैं पर समय के साथ-साथ ये अपने उद्गम और प्रेरणा के स्रोत को भूल गये और अपने आप को हिंदू समाज और हिंदू धर्म से अलग मानने लगे...' (पृ.166)। वो द्रविड़ पार्टियों की आलोचना करते हैं जब वो कहते हैं कि वो अलग नस्ल के हैं। इसी तरह जातीयवादी और वो सब जो भाषा के आधार पर अपनी अलग पहचान बनाना चाहते हैं वे सभी सांप्रदायिक हैं। ये सभी सांप्रदायिक लोग गोलवालकर के मुताबिक एक मूलभूत असूल नहीं मानते-हिंदुओं की एकात्मता और एकात्मक हिंदू जीवन शैली जो उनके मुताबिक हिंदू राष्ट्र में बहुत मूल्य रखती है।

आज के आर.एस.एस. नेता एच.वी.शेषाद्री अपनी किताब **'आर.एस.एस.: विज़न इन एक्शन'** 1988 में कहते हैं 'हेडगेवार का विज़न हमेशा स्वयंसेवकों को प्रेरित करता रहेगा जबतक वो भव्य हिंदू राष्ट्र के सपने को साकार नहीं कर लेते।'

वि.हि.प. की हिंदुत्ववाद की परिभाषा भी आर.एस.एस. से अलग नहीं है। गिरिराज किशोर, सीनियर वाइस प्रेसीडेन्ट, विहिप का मानना है कि लोकतंत्र बेमानी है। उन्होंने एक साक्षात्कार में कहा है ''मैं इसको कोई लोकतांत्रिक प्रणाली नहीं मानता जिसमें 51 बुरे लोग 49 अच्छे लोगों पर राज करते हैं। वैसे भी कोई नेता अपनी टीम में समझदार इंसान नहीं चाहता। लोकतंत्र में इसलिये, एक दिन बदमाश राज करेंगे। उनके मुताबिक राष्ट्रवाद की परिभाषा इस तरह है: ''मै राष्ट्रवाद की परिभाषा चार शब्दों में दे सकता हूँ: राज्य, राष्ट्र और सरकार। देश एक भौगोलिक इकाई है, राज्य एक राजनीतिक इकाई है, सरकार एक प्रशासनीय इकाई है जबकि राष्ट्र को हम एक सांस्कृतिक इकाई मानते हैं। प्रशासनीय और राजनीतिक इकाईयां संस्कृति से ऊपर नहीं हो सकती। यही हमारी राष्ट्रवाद की परिभाषा है। ''

ऊपर लिखे हुए की रोशनी में साफ साबित हो जाता है कि भारतीयता और हिंदुत्व दोनों एक ही हैं। इसलिये भाजपा का यह दावा कि दोनों शब्द एक इन्कयूलिसिव राष्ट्रीयता की तरफ इंगित करते हैं और झूठा और फिर सिर्फ राजनीतिक औचित्य है। सच कहा जाये तो वाजपेयी ने अपनी गोवा से 'म्यूज़ींगस' में दिसम्बर 2002 में कहा था: 'हिंदुत्व और कुछ नहीं सिर्फ भारतीयता है और मानव जीवन के विराट दर्शन में अपने आप को अभिव्यक्त करता है।' और अगर भाजपा-राजग के राज के दौरान हिंदुत्व की समझ वही थी जो हेडगेवार और गोलवालकर की थी तो आज आर.एस.एस. का भाजपा की जड़ों की तरफ वापसी का आदेश (मई 2004 के बाद) एक मुखौटा और भ्रम है।

साफ ज़ाहिर है कि संघ परिवार ने कभी भी भारतीयता को एक समग्र विचार के रूप में माना ही नहीं। उनके लिये भारतीयता का मतलब हमेशा से हिंदूराष्ट्र की परिकल्पना से रहा है।

नीचे लिखे से साबित हो जायेगा कि भा.ज.पा. इस सांप्रदायिक, फासीवादी और तानाशाही विचारधारा से कभी दूर गयी ही नहीं थी। चुनावों में हारने के बाद भा.ज.पा. सांप्रदायिकता फैलाने में और भी ज़्यादा गतिमान हो गयी है। भा.ज.पा. और संघ परिवार न केवल स्वशासित राज्यों में सांप्रदायिकता फैला रहे हैं बल्कि और दूसरे राज्यों में भी सांप्रदायिकता फैला रहे हैं।

गुजरात -गुजरात जनसंहार की तीसरी बरसी आते-आते जस्टिस यू.सी. बनर्जी जांच समिति की अंतरिम रिपोर्ट ने यह साबित कर दिया है कि गोधरा में जो

गाड़ी में आग लगी थी वो एक दुर्घटना थी ना कि साजिश जैसा कि गुजरात सरकार और नरेन्द्र मोदी देश को बता रहे थे। साजिश के नाम पर गुजरात सरकार ने प्रायोजित तौर पर जनसंहार करवाया और अल्पसंख्यकों को ***पोटा*** के तहत गिरफ्तार किया।

नरेन्द्र मोदी की गुजरात सरकार द्वारा प्रायोजित और भा.ज.पा.-रा.ज.ग. केंद्र सरकार द्वारा समर्थित गोधरा कांड के लिये सुप्रीम कोर्ट ने गुजरात प्रशासन की धर्म निरपेक्षता और पक्षपातहीनता पर अविश्वास जताते हुए अपने एक फैसले में गुजरात के डायरेक्टर जनरल ऑफ पुलिस की अध्यक्षता में गुजरात सरकार को एक उच्चस्तरीय समिति बनाने के आदेश दिये हैं। ये कमिटी उन 2000 केसों की नये सिरे से समीक्षा करेगी जिनको बिना जांच पड़ताल के यह कह कर खारिज किया गया था कि अभियुक्तों की खोज नहीं हो सकी। देश के अदालती इतिहास में यह पहली मिसाल है कि इतनी बड़ी तादाद में दाखिल दफ्तर किये गये केसों को फिर से खोला जा रहा है। इस निर्देश ने तीसरी बार इस बात की पुष्टि की है कि गुजरात का प्रशासनिक और पुलिस तंत्र बहुत हद तक सांप्रदायिक और अल्पसंख्यक विरोधी हो चुका है। इससे पहले बेस्ट बेकरी और बिलकिस बानो के केसों की गुजरात के बाहर सुनवाई करने के आदेश देकर सुप्रीम कोर्ट ने गुजरात की न्यायपालिका पर भी अविश्वास जताया था।

सुप्रीम कोर्ट के निर्देश के एक हफ्ते के बाद महाधिवक्ता ने जो रिपोर्ट दी उससे दंगों की असली तस्वीर निकल कर आती है। कुल 217 मामलों में सत्र न्यायलय अपना फैसला सुना चुका है और हैरत वाली बात तो यह है कि इनमें 211 मामलों में अभियुक्तों को बरी कर दिया है। दो में आंशिक रूप से दंगाइयों को दोषी पाया गया - और सिर्फ चार मामलों में सजा हुई। दाखिल दफ्तर किये गये 211 मामलों में सिर्फ 45 में अपील दाखिल की गयी और 156 मामलों में राज्य के कानून विभाग ने अपील न करने का फैसला लिया। इससे साफ साबित होता है कि गुजरात सरकार के विधि विभाग की दिलचस्पी अभियुक्तों को सज़ा दिलाने में कम बचाने में ज़्यादा थी।

यह बात याद रखने लायक है कि जो बिना जांच पड़ताल के केस दाखिल दफ्तर किये गये हैं उनमें सभी में संघ परिवार के सदस्यों के नाम थे। नरोदा पाटिया के बाबू भाई शेख द्वारा दायर की गयी एफ.आई.आर.में वि.हि.प. के जनरल सेक्रेटरी जयदीप पटेल का नाम लिखा है जो लूटमार और आगजनी करवा रहा था। इसी तरह नरोदा ग्राम में दूसरी एफ.आई.आर. में भाजपा की विधायक माया कोडनानी और जयदीप पटेल का नाम दर्ज है।

इस बीच एक खबर और आयी है जो गुजरात पुलिस के सांप्रदायिक होने का सबूतों में हेराफेरी करने और आरोपियों को बचाने के लिये सब- इंस्पेक्टर आर.जे.पाटील को गिरफ्तार कर लिया गया है। अब तक सीबीआई सबूतों की हेराफेरी करने के आरोप में छह पुलिस अफसरों को पहले ही हिरासत में ले चुकी है।

राज्य प्रशासन इस हद तक सांप्रदायिक हो चुका था यह इस बात से भी साबित होता है कि नानावटी आयोग के सामने अवर पुलिस महानिदेशक आर.बी.श्रीकुमार ने अपनी गवाही में माना है कि मंत्रियों ने पुलिस के जांच कार्य में दखलंदाज़ी की और मौखिक रूप से जांच धीमी करने, सत्य तक न पहुंचने के आदेश दिये। श्रीकुमार ने बताया कि उन्होंने तत्कालीन पुलिस निदेशक के.चक्रवर्ती और गुजरात सरकार के सुरक्षा सलाहकार के.पी.एस. गिल को सुझाव दिया था कि अहमदाबाद के पुलिस आयुक्त पी.पी.पांडे और उनके सहकर्मियों का तबादला किया जाए।

अभी-अभी अंतराष्ट्रीय मानवाधिकार निगरानी संगठन **एमनेस्टी इंटरनेशनल** ने अपनी ताजी रिपोर्ट में कहा है कि गुजरात दंगे के करीब तीन साल बाद भी भुक्तभोगियों को न्याय नहीं मिला है। दंगई आज भी खुलेआम घूम रहे हैं। **'जस्टिस, दि विक्टिम गुजरात स्टेट फेल्स टू प्रोटेक्ट वूमेन फ्रॉम वायलेंस** नामक रिपोर्ट में एमनेस्टी ने कहा है कि गुजरात की भाजपा सरकार वर्ष 2002 में दंगों के दौरान मुसलमानों की रक्षा करने में पूरी तरह विफल रही, खासकर महिलाओं और लड़कियों की। पुलिस ने न सिर्फ दंगाइयों को शह दी बल्कि कई जगह खुद दंगाई की भूमिका निभाई। पुलिस अधिकारियों ने रिपोर्ट लिखने में आनाकानी की, शिकायतें दर्ज नहीं कीं, थाने में विक्टिमों के साथ ज्यादतियां की गयीं। डॉक्टरों तक ने अपना फर्ज नहीं निभाया। मेडिकल रिपोर्टों में भी भारी गड़बड़ी पायी गयी। बलात्कार की शिकार महिलाओं के मामलों में जजों और अभियोजकों ने अभियुक्तों का साथ दिया और उन्हें मुक्त कर दिया। रिपोर्ट में कहा गया है कि अभी भी राज्य सरकार हमलावरों को कटघरे में खड़ा करने के कर्तव्य से पीछे हट रही है।

गुजरात के ही आनंद जिले के पेटलाड गांव में 14 अगस्त 2004 की दोपहर से दो समुदायों के बीच सांप्रदायिक दंगे होने की वजह से पुलिस ने अनिश्चित काल का कर्फ्यू लगा दिया था। पुलिस के मुताबिक आटोरिक्शा स्टैण्ड पर पार्किंग के अधिकार को लेकर सांप्रदायिक दंगा शुरू हुआ। इस दंगे में करीब एक दर्जन वाहन और सड़क के किनारे की दुकानें जलायी गयीं और लूटी गयीं। यह बात काबिलेगौर है कि इस आगजनी और लूट से दो घंटे पहले मुख्य मंत्री नरेंद्र मोदी ने पेटलाड से कुछ किलोमीटर की दूरी पर स्थित आनंद में स्वाधीनता दिवस समारोह का उदघाटन किया था। यह दंगा राज्य प्रायोजित ही माना जायेगा।

गुजरात विधानसभा में विपक्ष के नेता अर्जुन मोढ़वडिया ने जनवरी 2005 में कहा है कि मोदी सरकार गांवों में जाति, धर्म और संप्रदाय के नाम पर 'सर्वे' करवा रही है। 18 हज़ार गांवों में 'गांव की डायरी' के नाम से सर्वेक्षण 'फार्म' भेजे गये हैं जिसमें 27 कॉलमों में से 12 कॉलम ऐसे हैं जिसमें जाति, संप्रदाय, त्यौहार, त्यौहार के दिन, धार्मिक स्थलों की संख्या, उसका महत्व आदि की जानकारी मांगी गयी है। सरकार ये सर्वे वि.हि.प. बजरंग दल और आर. एस.एस. के लिए सरकारी खर्चे पर सरकारी शिक्षकों से करवा रही है ताकि हिंदू संगठन अपना हिंदू एजेंडा लागू कर सकें। साफ जाहिर है कि सरकार गांवों में कौमी एकता और सौहार्द को छिन्न भिन्न करना चाहती है और सांप्रदायिकता फैला रही है।

छत्तीसगढ़ - भा.ज.पा. शासित राज्य छत्तीसगढ़ में दलित स्टडी सर्कल और छत्तीसगढ़ सतनामी समाज का यह कहना है कि भाजपा के सत्ता में आने के बाद हिंदुत्ववादी और जातिवादी ताकतें प्रशासन और पुलिस सेवा में मजबूत हुई हैं। दलितों और आदिवासियों के साथ बढ़ते अत्याचारों और उत्पीड़न के बावजूद प्रशासन और पुलिस कोई कार्यवाही नहीं कर रही।

दलित स्टडी सर्कल के गोल्डी एम.जार्ज और छत्तीसगढ़ सतनामी समाज के तमस्कार टंडन ने बताया कि दुर्ग जिले के गुमका गांव की दो सतनामी दलित बस्तियों में 16 अगस्त 2004 को उच्चवर्णीय हिंदू और गैर दलितों ने दलितों की (जो गुरू घासीदास के शिष्य थे) पिटाई की क्योंकि वे दलित चाहते थे कि परंपरा के मुताबिक हिंदू भी उनके त्योहार में भाग लें। पुरुषों को बड़ी बेरहमी से पीटा गया, औरतों को निर्वस्त्र किया गया और उनकी बेइज्जती की गयी। इससे हमले के बाद गुमका की इन दो बस्तियों में रहने वालों का सामाजिक बहिष्कार किया गया, उनको गांव के कुंए से पानी लेने के लिये मना किया गया और दलितों को उनकी जाति के नाम से पुकारा गया।

13 अगस्त को छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर की तहसील सिमोगा में एक आदिवासी मजदूर राम कुमार ध्रुव को पुलिस कस्टडी में मारा गया। उसे 18 जुलाई को छुटपुट चोरी के आरोप में गिरफ्तार किया गया था और 11 अगस्त को उसकी सार्वजनिक तौर पर (पब्लिकली) पिटाई की गयी जिसके बाद वो

पुलिस हिरासत में मर गया। पुलिस ने इसे आत्महत्या का केस बताया। इसके बाद छत्तीसगढ़ हाई कोर्ट में एक पी.आई.एल. दायर किया गया। हाई कोर्ट ने एक बार फिर पोस्ट मार्टम करवाया और उसमें साफ पाया गया कि ध्रुव की मौत चोटें लगने से हुई थी। पुलिस गांव वालों को गवाही न देने के लिये डरा-धमका रही है। दलित स्टडी सर्कल और छत्तीसगढ़ सतनामी समाज अब राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग से मुलाकात करने का मन बना रहे हैं।

मध्य प्रदेश- भा.ज.पा. शासित राज्य मध्य प्रदेश के दमोह जिले से पठारिया 'जनपद' में सत्ताधारी भाजपा के शासन में एक दलित महिला एम.एल.ए. सोनाबाई सेवकराम अहिरवार के साथ 15 अगस्त 2004 को आयोजित स्वतंत्रता दिवस पर धक्का-मुक्की की गयी और उन्हें तिरंगा नहीं फहराने दिया गया। इस धक्का मुक्की में उनके दायें हाथ पर चोटें आयीं। उन्होंने कहा कि पठारिया जनपद के अध्यक्ष रघुवीर पटेल और ड्यूटी पर तैनात पुलिस कर्मियों ने उन्हें तिरंगा फहराने से रोका। ये उदाहरण भाजपा की चार्तुवर्णीय नीति दलित विरोधी और सांप्रदायिक विचारधारा साबित करता है।

भाजपा प्रशासित मध्य प्रदेश की पूर्व मुख्यमंत्री उमा भारती अपने आप को 'महारानी' समझकर साधु-सन्तों की सलाह मशविरा से राजधर्म निभा रहीं थी। **'साध्वी-महारानी'** ने 'आलटरनेटिव स्ट्रेटेजीस फॉर डेवलपमेंट' पर एक राष्ट्रीय सेमिनार में कहा कि राज्य के सम्पूर्ण विकास और आम आदमी के वेलफेयर में विभिन्न धर्मो के साधु-सन्त एक प्रभावशाली भूमिका निभा सकते हैं। आध्यात्म गुरु बापू आसाराम इस सेमिनार के प्रमुख अतिथि थे। 'महारानी' भारती ने कहा कि वे सामाजिक चेतना जगाने के लिये साधु-सन्तों की मदद लेंगी। 'महारानी' उमा भारती भारत के राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुलकलाम को भी एक सन्त मानती हैं। 'सन्त' राष्ट्रपति से इसीलिये इस सेमिनार का उद्घाटन करवाया गया और बापू आसाराम जी से समापन कराया गया - उमा भारती ने कहा! भाजपा और आर.एस.एस. के संतमय और सांप्रदायिक चरित्र की ये एक बड़ी मिसाल है।

जिस बिजली, पानी, सड़क के मुद्दे पर भाजपा मध्य प्रदेश में चुनाव जीती उनमें से एक मुद्दा आज एक साल के बाद भी मध्य प्रदेश सरकार के लिये परेशानी का बायस बना हुआ है। कांग्रेस सरकार के दौरान जो बिजली की कटौतियां शुरू थीं वही अब दिसम्बर से भाजपा सरकार ने भी शुरू कर दी हैं। सारे राज्यों में बिजली में कटौती को लेकर आंदोलन और प्रदर्शन शुरू हैं। यहां तक कि रबी की फसल की सिंचाई में लगे किसान भी इस आंदोलन में भाग ले रहे हैं। नवम्बर में म्यूनिसिपल चुनावों के जीतने के फौरन बाद से मध्य प्रदेश सरकार ने बिजली की कटौती शुरू कर दी है। आज मध्य प्रदेश में डिवीज़नल हेडक्वार्टर्स में दो घंटे, डिस्ट्रिक्ट हेडक्वार्टर्स में छः घंटे और तहसील हेडक्वार्टर्स में आठ घंटे की कटौती है। राजधानी भोपाल में बिजली की कटौती नहीं की है! यह बात याद रखने लायक है कि **मध्य प्रदेश में भाजपा सरकार देश में सबसे मंहगी दरों पर बिजली दे रही है। गुजरात दूसरा भाजपा शासित राज्य है जहां बिजली की दरें इतनी ही ऊंची हैं।** बिजली की कटौती इतनी ज्यादा है कि रतलाम में किसान स्टेट इलेक्ट्रीसिटी बोर्ड के कर्मचारियों को पेड़ों से बांध रहे हैं, दमोह में किसानों ने चार घंटों तक यातायात रोके रखा और राजगढ़ में किसानों का रोष बढ़ रहा है।

मध्य प्रदेश में 23 जनवरी 2005 को संघ के बौद्धिक प्रचार के मुकाबले में नेशनल इस्लामिक मूवमेंट ऑफ इंडिया (निमी) ने अपने पोस्टर लगा दिये हैं जिनमें लिखा है **'ये वही शरीफ लोग हैं, जिन्होंने अपनी 16 हजार औरतों को जलाकर मार डाला।'** हर साल 23 जनवरी को संघ पथ संचालन करता है और वो भी यूनीफार्म पहनकर। इस बार संघ ने अपने पथ संचालन में हिंदुओं को अपनी तरफ जुटाने के लिये आबादी के आंकड़ों के लिये (जो पहले ही गलत साबित हो चुके हैं) प्रश्नात्मक भाषा का उपयोग किया। वि.हि.प. ने कहा कि कांग्रेस को मुसलमानों की वकालत करने का अधिकार किसने दिया और संघ के पूर्व प्रचारक ने कहा कि समाज को सचेत करने के लिये अगर कुछ लिखा गया है तो इसमें किसी को आपति क्यों है। साफ है मध्य प्रदेश का माहौल सरकार खुद ही सांप्रदायिक बना रही है।

राजस्थान-भा.ज.पा. शासित राज्य राजस्थान में हाल ही में उदयपुर जिले के सारडा शहर में आदिवासियों और अल्पसंख्यकों (मुसलमानों) के बीच झगड़े हुए । राजस्थान के गृहमंत्री गुलाबचंद कटारिया के सारडा दौरे के बाद तनाव और बढ़ा। कटारिया के पक्षपाती व्यवहार ने अल्पसंख्यकों को अपने घर छोड़कर भागने पर मजबूर कर दिया। इन दंगों से ये लगता है कि सारडा में गुजरात दोहराने की कोशिश की जा रही है खासकर उन आदिवासी क्षेत्रों में जो गुजरात सीमा से जुड़े हैं। यह बात काबिले गौर है कि राजस्थान मुस्लिम फोरम ने राज्य सरकार को सांप्रदायिक बताया है। उसने कहा है कि सारडा से ज़्यादातर अल्पसंख्यक परिवार सांप्रदायिक हमले के बाद अपने-अपने घर छोड़ कर भाग गये हैं। फोरम ने इल्ज़ाम लगाया है कि यह सांप्रदायिक हिंसा 'गुजरात पैटर्न' पर प्रायोजित और राज्य सरकार द्वारा समर्थित थी।

फोरम के छह सदस्यों की टीम ने 6-8 अगस्त 2004 के बीच सारडा का दौरा किया और इस टीम ने पाया कि अल्पसंख्यक पुलिस और आदिवासियों दोनों ही द्वारा डराये और धमकाये गये थे और गृहमंत्री कटारिया के दौरे के बाद पुलिस ने अल्पसंख्यकों के घरों पर छापे मारने शुरू किये। फोरम के सदस्यों-मुस्लिम फोरम संगठनों और संस्थानों की शीर्ष शाखा है-ने एक प्रेस कॉन्फ्रेंस में कहा कि 200 मुस्लिम परिवार सारडा से उदयपुर, सलुमबार, खैरवाड़ा और दुर्गापुर चले गये हैं क्योंकि आज भी आदिवासियों को उनके खिलाफ नये हमले करने के लिए उकसाया जा रहा है। मोहम्मद सलीम-फोरम के एक सदस्य और राजस्थान के जमात-ए-इस्लामी हिन्द के अध्यक्ष-के घर पर छापा डालकर उन्हें डराया गया। मुजाहिद अली नकवी - टीम के एक सदस्य ने बताया कि 30 जुलाई 2004 को 5000 आदिवासियों की एक भीड़ ने दो मुस्लिम मुहल्लों पर हमला किया। उन्होंने कहा कि सारडा में कराये गये सांप्रदायिक हमले 'गुजरात पैटर्न' का आदिवासियों को मुसलमानों के खिलाफ भड़काने का एक सफल प्रयोग था।

राजस्थान में ही संघ परिवार के कार्यकर्ताओं ने 9 अगस्त 2004 को राजस्थान राज्य परिवहन निगम की एक बस को जो आदिवासी ईसाइयों को बंसवारा से अजमेर ले जा रही थी, चितौड़गढ़ रेलवे स्टेशन के पास यह इल्ज़ाम लगाकर कि उन्हें धर्म परिवर्तन के एक समारोह में ले जाया जा रहा है, रोक दिया। उस बस में 28 लोगों का ग्रुप था जिसमें 10 महिलाएं और 6 एक्सटेंशन वर्कर के अलावा और मुसाफिर भी थे। चितौड़गढ़ के बस स्टेण्ड पर संघ परिवार के कार्यकर्ताओं ने बस में घुसकर मुसाफिरों के साथ, जिसमें आदिवासी प्रिस्ट स्टीफन रावत, जो जीवन विकास समिति के डायरेक्टर हैं, भी शामिल थे, मारपीट की।

राजस्थान की सत्ताधारी भारतीय जनता पार्टी, कांग्रेस सरकार के राज के दौरान सांप्रदायिक दंगों के दर्ज किये गये मामले मनमाने तौर पर (सिलेक्टीवली) वापिस ले रही है। राजस्थान एसेम्बली को दी गयी सूचना के मुताबिक सरकार ने ऐसे 122 केस वापिस ले लिये हैं और 68 विचाराधीन हैं। जितने भी केस वापिस लिये गये हैं उन सब में आर.एस.एस., वि.हि.प., बजरंग दल, वनवासी कल्याण परिषद और शिव सेना के कार्यकर्ता आरोपित हैं। इन सबके खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धाराएं 395, 295, 436, 427, 440, 148 में मामले दर्ज थे। इन्हीं केसों में जो अल्पसंख्यक समुदाय के आरोपित थे उनके विरुद्ध केसेस वापिस नहीं लिये गये हैं।

राजस्थान के मानवाधिकारियों से संबंधित राजस्थान की पीपुल्स यूनियन फॉर लिबर्टीज़ के पूर्व अध्यक्ष और वकील प्रेम कृष्ण शर्मा ने कहा 'कलिन्जरा की मिसाल को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि सरकार का केस वापिस लेने का आदेश राजनैतिक और सांप्रदायिक इरादों से प्रेरित है।' 'ये सरकारी आदेश सांप्रदायिकता को बढ़ावा देगा और अल्पसंख्यकों के विरुद्ध दंगों को

भड़कायेगा', ये राजस्थान के पी.यू.सी.एल. के अध्यक्ष थान सिंह जाटव ने कहा।

राजस्थान में भाजपा की सरकार ने 'वंदे मातरम' का गायन सभी होस्टलों में हर सुबह अनिवार्य कर दिया है। हाल ही में एक और आदेश जारी किया है जिसके मुताबिक 2 अक्टूबर 2004 से हर होस्टल में हर खाने से पहले भोजन मंत्र का उच्चारण करना आवश्यक होगा। शिक्षकों को भोजन मंत्र सिखाने का आदेश भी दे दिया गया है। ये आदेश पूरी तरह से असंवैधानिक हैं क्योंकि कोई भी धर्म दूसरे धर्मावलंबियों पर जबर्दस्ती थोपा नहीं जा सकता। ये सब आर.एस.एस के एजेंडे के तहत हो रहा है।

दागी मंत्रियों के मुद्दे पर पार्लियामेन्ट का कामकाज न चलने देने वाली भाजपा शासित राजस्थान राज्य में आज भी दागी विधायक मंत्री बने हुए हैं और अपना काम कर रहे हैं। राजस्थान सत्ताधारी भाजपा की वसुंधरा राजे सरकार के 6 मंत्री आजकल सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुंचाने और कानून तोड़ने के जुर्म में अदालतों में पेश हो रहे हैं। इसके अलावा मौजूदा प्रदेशाध्यक्ष रघुवीर सिंह कौशल और पूर्व विधायक नाथूलाल गुर्जर के विरुद्ध बूंदी जिले की एक अदालत ने राजमार्ग अवरुद्ध कर बलवा करने के मामले में गैर जमानती वारंट जारी किये हुए हैं। भाजपा सरकार के मंत्रियों में खुद गृहमंत्री गुलाबचंद कटारिया अदालती कार्रवाई का सामना कर रहे हैं। इनके विरुद्ध मानहानि का दावा चल रहा है। संघ परिवार के चहेते समाज कल्याण मंत्री मदन दिलावर के विरुद्ध हत्या के प्रयास, राज्य कर्मचारी पर हमला, राजकाज में बाधा और आर्म्स एक्ट के तहत ग्यारह मुकदमें विचाराधीन हैं। खाद्य एवं आपूर्ति मंत्री किरोड़ी लाल मीणा के खिलाफ सवाई माधोपुर में बलवा, चोरी, और राज्य कर्मचारी पर हमले के दो, चिकित्सा राज्य मंत्री भवानी जोशी के विरुद्ध बंसवाड़ा में सरकारी कर्मचारी पर हमले, भड़काऊ भाषण देने और लोगों की जान खतरे में डालने के चार मसले चल रहे हैं।

आजकल राजस्थान की मुख्यमंत्री वसुंधरा राजे अपने आप को महारानी मानती हैं और मां शक्ति के रूप में राजस्थान में पूजा पाठ कर रही हैं। राज्य धर्म और अंधविश्वास को बढ़ावा दे रहा है।

भाजपा शासित राज्य राजस्थान में सेंटर ऑफ दलित ने राज्यपाल को एक ज्ञापन दिया है जिसमें उन्होंने शिकायत की है कि मुख्यमंत्री दलितों को मिलती तक नहीं हैं। प्रशासन दलितों की समस्याओं के प्रति संवेदनहीन है। दलितों पर लगातार अत्याचार हो रहे हैं। दलितों के मानवाधिकारों का हनन हो रहा है। चकवाड़ा गांव में दलितों को सार्वजनिक तालाब से पानी नहीं लेने दिया जा रहा है और छुआछूत आज भी जारी है। इनकी मांग है कि जिन दलितों की खेती दूसरों ने हथिया ली है उसे वापस की जाये। सेंटर ऑफ दलित राइटस के अध्यक्ष पी.एल.भीमरथ ने मांग की है कि के.एस.लोघा जांच समिति की रिपोर्ट विधानसभा में रखी जाये। 1991 में भरतपुर जिले में हुए जनसंहार में सवर्णों द्वारा 17 दलित मार दिये गये थे। के.एस.लोघा समिति ने इस जनसंहार की जांच करके रिपोर्ट सरकार को दी है।

मध्य प्रदेश भाजपा सरकार की ही तरह विकास, बिजली और पानी के नाम पर चुनाव जीती राजस्थान भाजपा सरकार किसानों को बिजली नहीं दे रही है। उत्तर-पश्चिम राजस्थान में किसान बिजली की दरों में वृद्धि के खिलाफ आंदोलन कर रहे हैं। किसानों को आठ घंटे भी बिजली नहीं दी जा रही है और किसानों के उधार भी माफ नहीं किये हैं।

उड़ीसा - उड़ीसा में भाजपा बीजेडी की सरकार में सांप्रदायिकता और अल्पसंख्यक विरोधिता बढ़ती जा रही है। कधामाल जिले के रेइकिया शहर में 26 अगस्त 2004 को एक 50 साल पुराने कैथोलिक चर्च पर एक समुदाय ने हमला किया। इस हमले के बाद अभी तक कोई भी गिरफ्तारी नहीं हुई है। जनता की एक भीड़ ने, जिसमें कुछ स्थानीय व्यापारी भी शामिल थे, मिलकर पहले अल्पसंख्यकों द्वारा संचालित स्कूल की बाढ़ तोड़ी और बाद में चर्च को भ्रष्ट किया। हमलावरों ने मूर्तियां, फर्नीचर और संगीत वाद्य तोड़ दिये । नतीजा, आज 3000 ईसाई परिवार डर और भय के माहौल में रह रहे हैं। ताज्जुब नहीं होगा अगर स्टेंस जैसी घटना फिर एक बार घट जाये।

विहिप द्वारा एक आयोजित सभा में आदिवासी मयूरभंज जिले के बैरीपदा गांव में 50 ईसाई परिवारों को दोबारा से हिंदू बनाया गया। विहिप के राज्य सचिव गौरी प्रसाद रथ ने इसे 'घर वापिसी' बताया। राऊरकेला में विहिप और आर.एस.एस. ने दिसम्बर 2004 में 37 इसाईयों को दोबारा से हिंदू बनाया। इस तरह विहिप और आर.एस.एस. हिंदुत्ववादी नीतियों को अमल में ला रहे हैं। इस बीच ईसाई नेताओं ने इस जबर्दस्ती 'घर वापसी' पर विरोध जताते हुए कहा है कि प्रशासन पक्षपात कर रहा है। प्रशासन उन सबको जो ईसाई बनना चाहता है उन्हें इजाज़त नहीं देता दूसरी तरफ जो हिंदू बनना चाहते हैं उन्हें फौरन 'घर वापसी' समारोह आयोजित करने की इजाज़त देता है।

झारखंड - भा.ज.पा. शासित राज्य झारखंड में भा.ज.पा. ने अपने शासन काल में पंचायत चुनाव नहीं करवाया। इससे यह साबित होता है कि भा.ज.पा. लोकतंत्र में विश्वास नहीं रखती।

भाजपा सिर्फ अपने ही या अपने गठबंधन प्रशासित राज्यों में ही सांप्रदायिकता का ज़हर नहीं फैला रही है। अन्य राज्यों में भी अपने संघ परिवार की मदद से यह सांप्रदायिक दंगे करवा रही है। अल्पसंख्यकों को डरा रही है। दलितों पर अत्याचार कर रही है। नीचे लिखे उदाहरण ये बताते हैं।

महाराष्ट्र - भाजपा शिवसेना ने विधानसभा चुनावों के दौरान एक बार फिर सोनिया गांधी के विदेशी मूल का मुद्दा उठाया है। बाल ठाकरे ने मणिशंकर अय्यर के बयान पर अय्यर के पुतले को जूते मारे। इसमें लोकसभा के पूर्व स्पीकर भी शामिल थे।

केरल - 18 सितंबर 2004 कोजीकोड (केरल) जो मिशनरीज़ ऑफ चैरिटी के कार्यकर्ताओं पर हमला हुआ उसमें नौ कार्यकर्ता घायल हुए। इनमें मदर सुपीरियर कुसमुम भी शामिल थीं। इस हमले के आरोप में भाजपा-आर.एस.एस. के चौदह समर्थकों को पुलिस ने गिरफ्तार किया।

मदर सुपीरियर कुसमुम ने बताया कि उनकी संस्था के कार्यकर्ता 14 सितंबर को इलाके के गरीबों को चावल और दवाईयां बांटने गये थे। संस्था दो साल से गरीबों और बेसहारा लोगों की मानवीय मदद करने का काम कर रही है। कालोनी के निवासियों ने बताया कि जिन नन्स पर हमला हुआ है वो उनकी बहुत मदद करतीं थीं। नेशनल माइनोरिटीज़ कमीशन के सदस्य वी.वी. आगस्टिन, जिन्होंने भाजपा के टिकट पर चुनाव लड़ा था, ने भी दलित बस्ती को भेंट दी। उन्होंने भी कहा कि बस्ती वालों के साथ बातचीत के बाद वो पूरी तरह से संतुष्ट हो गये हैं कि नन्स धर्मान्तरण नहीं करवा रही थीं।

कर्नाटक-हुबली में विहिप के प्रवीण तोगड़िया ने केंद्रीय सरकार के कमीशन फॉर वेलफेयर ऑफ सोशली एंड इकोनोमिकली बैकवर्ड्स एमंग रिलीजस एंड लिंगविस्टिक माइनोरिटीज़ के फैसले को असंवैधानिक बताया है। अल्पसंख्यक विरोधी विहिप और क्या कर सकती है।

दिसम्बर 24 को भाजपा ने चिकमंगलूर में शोभा यात्रा निकालने पर ज़िला प्रशासन के लगाये प्रतिबंध को तोड़कर शोभा यात्रा निकाली जिसमें 12 विधायक गिरफ्तार किये गये। भाजपा और संघ परिवार का कहना है कि उनका आंदोलन जब तक जारी रहेगा जब तक हिंदुओं को दत्तात्रेय पीठ में उनके रिवाज़ों के मुताबिक पूजा-अर्चना करने की इजाज़त नहीं दी जायेगी। उन्होंने ये भी कहा कि चिकमंगलूर को दूसरा अयोध्या बना देंगे।

उपर लिखे से साफ साबित हो जाता है कि भा.ज.पा. एक सांप्रदायिक, फासीवादी अलोकतांत्रिक, तानाशाही पार्टी है। आर.एस.एस. की हिंदुत्ववादी विचारधारा से प्रेरित ये पार्टी अल्पसंख्यक, दलित और महिला विरोधी है। लोकतांत्रिक और धर्मनिरपेक्ष ताकतों को देश को बताना चाहिये कि उसे भा.ज.पा. जैसी हिंदुत्ववादी राजनीतिक पार्टी और आर.एस.एस., वि.हि.प. और बजरंग दल जैसे तथाकथित सांस्कृतिक संगठनों से सावधान रहना चाहिये।

रिमझिम बरसे मेह

साझी विरासत की हिफाजत का सवाल

आदियोग, आवाज़, लखनऊ

पिछले कुछेक दशकों में संस्कृति का सवाल राजनैतिक मोर्चे पर सर चढ़ कर बोल रहा है, संस्कृति की बहस बांह चढ़ाने के नाम होती जा रही है। पाठक जानते हैं कि इसके पीछे कौन सी ताकत और कौन से विचार हैं, उनका रास्ता किधर से होकर जाता है और उनका कुल मकसद क्या है। यह हमारे दौर की उलटबांसी है कि जो सिरे से असभ्य और असांस्कृतिक हैं, उन्होंने ही देश-दुनिया को सभ्यता और संस्कृति का पाठ पढ़ाने का ठेका ले रखा है। ईराक में अगर यह ठेकेदारी अमरीका-ब्रिटेन और उनके पिछलग्गू देशों के कब्ज़े में है तो अपने देश में यही कमान भगवा गिरोह के हाथ में है। ईराक से आतंक को खदेड़ देने और इराकियों को आजादी दिलाने के नाम पर विदेशी फौजें घुसी थीं, लेकिन इरादा तो इराक में अपनी वहशियत के झंडे गाड़ना और ईराकियों को गुलाम बनाना था। यह सिलसिला आज भी जारी है, आग और खून से लथपथ ईराक कराह रहा है, बर्बादी की राह पर है और ऊपर से जॉर्ज बुश अमरीकी राष्ट्रपति की गद्दी पर दोबारा काबिज हो चुके हैं। भगवा गिरोह इतना खुशकिस्मत नहीं रहा, उसकी कारगुजारियों की काली छाया पिछले लोकसभा चुनाव के नतीजे पर खूब दिखी और जनादेश ने उन्हें सत्ता से बाहर कर दिया। इसका यह भी मतलब नहीं कि अगर अमरीका में जॉर्ज बुश हार जाते तो अमरीका बदल जाता। जॉन कैरी किस मामले में जॉर्ज बुश से कितना अलग हैं? कान इधर से पकड़ो या उधर से, क्या फर्क पड़ता है-पकड़ोगे तो आखिर कान ही। बुश-कैरी के बीच बस इतनी दूरी है। राहत की बात है कि थाली के गिने-चुने बैगनों को छोड़ दें तो अपने देश में भगवा गिरोह और बाकी दलों के बीच का फासला काफी हद तक साफ नजर आता है।

इस पर गर्व किया जाना चाहिए, लेकिन खतरों से बेपरवाह होकर नहीं। सत्ता से बाहर होने की खीज और बौखलाहट का इधर भाजपा और उसके संगी-साथियों ने आक्रामक इज़हार किया है। आजादी की जंग से जिनका कभी कोई नाता नहीं रहा, जिन्होंने विलायती प्रभुओं का दामन थामा और गद्दारी का ईनाम हासिल किया, उन्होंने तिरंगा यात्रा ही कर डाली। उन सावरकार के नाम पर हंगामा जोता गया, जिसकी 'वीरता' जेल की सलाखों के पीछे टिक नहीं सकी और जो विदेशी राज का गुणगान करने और आजादी की मांग से तौबा करने के वायदे पर 'आजाद' कर दिये गये थे। रामजन्मभूमि बनाम बाबरी मस्जिद का मामला तो जैसे सदाबहार है और अब नये सिरे से पिटारी के बाहर है, फुंफकार मार रहा है। बाबरी मस्ज़िद की शहादत से पहले और उसके बाद पूरे देश को, और इस नयी सदी में गुजरात को उग्र हिंदुत्व की वहशी प्रयोगशाला में तब्दील कर दिया गया। किसी खास समुदाय के खिलाफ राज्य प्रायोजित हिंसा की मिसाल कायम की गयी। बस्ती की बस्ती उजड़ गयी, आग के हवाले हो गयी। इस आग में मुसलमान भी भून दिये गये। हिंदुत्व के रक्षकों ने मुस्लिम औरतों को अपनी जवांमर्दी का मैदान बना दिया। नन्ही-नन्ही बच्चियों और बूढ़ी औरतों को भी नहीं बख्शा गया। दूकान-कारखानों से लेकर मस्जिदों तक पर अंधी नफरत का कहर टूटा। गौर करें कि गुजरात में मस्ज़िदों के साथ-साथ मजारें और दरगाहें भी हमले का निशाना बनीं। कहें कि पहले निशाने पर थे, वे प्रतीक जो जाति-धर्म के भेद से मुक्त हैं और आपसी मिलाप के ऐतिहासिक केंद्र हैं। न रहेगा बांस, न बजेगी बांसुरी। यह बांसुरी अमन-चैन की है, मोहब्बत और इन्सानियत की है। यह आपसी मतभेदों को धीमा और फीका करती है। दूरियां घटाती और करीबी बढ़ाती है, सुख-दुख साझा करने का मौका और एक साथ खड़े होने का अहसास कराती है। लेकिन यह मीठी धुन भगवा गिरोह को आदतन रास नहीं आती। हिंदी-हिंदू-हिंदुस्तान का नारा यही गवाही पेश करता है। इसके सीधे निशाने पर हमारी सतरंगी संस्कृति और उसकी साझी विरासत है जो विभिन्न मतों के लोगों के बीच मजबूत पुल की भूमिका अदा करती रही है। इस धुन को मटियामेट कर देने की बेहूदा मुहिम इधर नये उफान पर है।

नई दिल्ली स्थित 'इन्स्टीटयूट फॉर सोशल डेमोक्रेसी' ने इस चिंता और चुनौती को अपना पहला एजेंडा बनाया है और सामाजिक क्षेत्र में उसे आम दिलचस्पी का विषय बनाने का बीड़ा उठाया है, इस समझ के साथ

शेष पृष्ठ 8 पर .....

isd **इंस्टीट्यूट फॉर सोशल डेमोक्रेसी**
फ्लैट नम्बर-110, नम्बरदार हाउस, 62-ए, लक्ष्मी मार्केट,
मुनिरका, नई दिल्ली-110067
टेलीफोनः091-11-26177904, टेलीफैक्सः 091-11-26177904
ईमेलः <notowar@rediffmail.com>

☐ केवल सीमित वितरण के लिए